सत्यमेव जयते

भारत सरकार

भारत का विधि आयोग

रिपोर्ट सं0 257

भारत में संरक्षकता और अभिरक्षा संबंधी विधियों में सुधार

मई, 2015

न्यायमूर्ति अजित प्रकाश शहा
भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय
अध्यक्ष
भारत का विधि आयोग
भारत सरकार
हिन्दुस्तान टाइम्स हाउस
कस्तूरबा गान्धी मार्ग, नई दिल्ली - 110 001
दूरभाष : 23736758, फैक्स/ Fax:23355741

सत्यमेव जयते

Justice Ajit Prakash Shah
Former Chief Justice of Delhi High Court
Chairman
Law Commission of India
Government of India
Hindustan Times House
K.G. Marg, New Delhi - 110 001
Telephone : 23736758, Fax : 23355741

अर्ध.शास.पत्र सं. 6(3)/268/2014-वि.आ.(एल.एस.) 22 मई, 2015

प्रिय श्री सदानन्द गौड़ा जी,

भारत के विधि आयोग ने, अभिरक्षा और संरक्षकता संबंधी मामलों का न्यायनिर्णयन करने में "बालक के कल्याण" को सर्वोपरि विचारणीय बात के रूप में बल देने के लिए भारत में सम्मिलित रूप से पालन पोषण करने की पद्धति को अपनाने के मुद्दे का अध्ययन करने का विनिश्चय किया ।

आयोग ने, नवंबर, 2014 में, इस विषय पर एक परामर्श पत्र जारी किया था। परामर्श पत्र में विश्वभर में सम्मिलित रूप से पालन पोषण करने की पद्धतियों का विश्लेषण तथा भारत में विद्यमान विधि का पुनर्विलोकन किया गया था। आयोग द्वारा सम्मिलित पालन पोषण से संबंधित एक प्रश्नावली भी जारी की गई तथा जनता से इस पर टिप्पणियां मांगी गई थीं। आयोग ने जनता से अनेकों उत्तर प्राप्त होने पर, विकासशील और विकसित दोनों देशों में सम्मिलित पालन-पोषण से संबंधित विधिक उपबंधों का, विशेषतया उन परिस्थितियों पर, जिनमें संयुक्त अभिरक्षा दी जा सकती है, पालन-पोषण की योजनाओं और मध्यस्थता पर बल देते हुए अध्ययन करने के लिए एक उपसमिति का गठन किया। इसके अतिरिक्त, समिति ने विधि विशेषज्ञों, विधि व्यावसायियों और अन्य संबद्ध व्यक्तियों के साथ अनेक बैठकें करके भारत में सम्मिलित पालन-पोषण की संकल्पना की प्रकृति और व्याप्ति की रूपरेखा तैयार की तथा वर्तमान विधि में के उन उपबंधों की पहचान की, जिनका संशोधन किए जाने की आवश्यकता है।

अनेक दौर के विचार-विमर्श तथा चर्चा के पश्चात् आयोग के दृष्टिकोण इसी के आस-पास केन्द्रित रहे कि (i) संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम,1890 में कल्याण के सिद्धान्त को सुदृढ़ बनाया जाए और संरक्षकता तथा अभिरक्षा संबंधी विनिश्चय करने में उसकी सुसंगतता पर बल दिया जाए; (ii) संरक्षकता और अभिरक्षा के संबंध में माता-पिता, दोनों, को समान प्रास्थिति प्रदान की जाए; (iii) विनिश्चयकर्ताओं की इस बात का निर्धारण करने में सहायता करने के लिए विस्तृत दिशा निर्देशों का उपबंध किया जाए कि कौन सी संरक्षकता संबंधी व्यवस्थाओं से बालक का, विनिर्दिष्ट

स्थितियों में, कल्याण होगा; और (iv) ऐसी कतिपय परिस्थितियों में, जो बालक के कल्याण में सहायक हो, माता-पिता, दोनों, को संयुक्त अभिरक्षा प्रदान करने के लिए विकल्प का उपबंध करना।

आयोग की उपर्युक्त सिफारिशें "भारत में संरक्षकता और अभिरक्षा संबंधी विधियों में सुधार" नामक इसकी रिपोर्ट संख्यांक 257 के रूप में पेश की गई हैं और इसे सरकार के विचारार्थ इसके साथ संलग्न किया जा रहा है।

सादर।

आपका,

ह./-

[अजित प्रकाश शहा]

श्री डी.वी. सदानंद गौड़ा
माननीय विधि और न्याय मंत्री
भारत सरकार
शास्त्री भवन
नई दिल्ली

रिपोर्ट सं॰ 257

भारत में संरक्षकता और अभिरक्षा संबंधी विधियों में सुधार

विषय-सूची

अध्याय	शीर्षक	पृष्ठ
1.	**रिपोर्ट की पृष्ठभूमि**	1-9
अ.	**''बालक का कल्याण'' : ऐतिहासिक क्रमविकास**	2
आ.	**अन्तरराष्ट्रीय मानव अधिकार विधि में ''बालक का सर्वोत्तम हित''**	4
इ.	**संयुक्त अभिरक्षा**	6
ई.	**आयोग द्वारा प्राप्त उत्तरों का सारांश**	7
उ.	**वर्तमान रिपोर्ट**	9
2.	**भारत में अभिरक्षा और संरक्षकता को शासित करने संबंधी विधिक ढांचा**	**10-21**
अ.	**कानूनी विधि**	
	(i) संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890	10
	(ii) हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956	12
	(iii) हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955	15
	(iv) इस्लामिक विधि	15
	(v) पारसी और क्रिश्चियन विधि	16
आ.	न्यायिक निर्वचन	16
	(i) पिता की उच्चतर स्थिति	17
	(ii) कल्याण संबंधी मानक की अनिश्चितता	19
3.	**संयुक्त अभिरक्षा की संकल्पना**	**22-30**
अ.	**संयुक्त अभिरक्षा के प्रति अन्तरराष्ट्रीय दृष्टिकोण**	22
आ.	**भारत में संयुक्त अभिरक्षा**	26
इ.	**भारत में संयुक्त अभिरक्षा को अंगीकार किए जाने के कारण**	28
4.	**बाल अभिरक्षा के मामलों में मध्यस्थता**	**31-36**
क.	**भारत में मध्यस्थता के लिए वर्तमान विधिक ढांचा**	31
ख.	**बालक अभिरक्षा में मध्यस्थता के संबंध में अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण**	33

5.	**बालक अभिरक्षा संबंधी मामलों का विनिश्चय करने के लिए विचारणीय बातें**	**37-45**
क.	**सर्वोत्तम हित मानक के लिए विचार करने वाले कारक**	37
ख.	**बालक की अधिमानता का अवधारण**	38
ग.	**बालक के अभिलेखों तक पहुंच**	39
घ.	**पितामह-पितामही मातामह-मातामही द्वारा पालनपोषण समय**	40
ङ.	**मध्यस्थता**	40
च.	**स्थान-परिवर्तन**	41
छ.	**विनिश्चय करना**	42
ज.	**पालनपोषण योजना**	43
झ.	**मुलाकात**	43
6.	**सिफारिशों का सार**	**46-58**
क.	**हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 में संशोधन**	46
ख.	**संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 में संशोधन**	49
	उपाबन्ध-1 हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता (संशोधन) विधेयक, 2015	**59-60**
	उपाबन्ध-2 संरक्षक और प्रतिपाल्य (संशोधन) विधेयक, 2015	**61-77**

अध्याय 1
रिपोर्ट की पृष्ठभूमि

1.1 भारत के विधि आयोग की इस रिपोर्ट में, अभिरक्षा और संरक्षकता के मामलों का न्यायनिर्णयन करने में "बालक के कल्याण" पर सर्वोपरि विचारण के रूप में बल देने के लिए अनेक विधायी संशोधन किए जाने की सिफारिश की गई है । विवाह-विच्छेद और परिवारों के टूटने की कार्यवाहियों में सबसे बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है । अभिरक्षा की कार्यवाहियों में बालक के कल्याण के केन्द्रित महत्व को बनाए रखने से यह सुनिश्चित करने में सहायता मिलेगी कि बालक का भविष्य, पारिवारिक परिस्थितियों में बदलाव को विचार में लिए बिना, सुरक्षित और संरक्षित है । भारत में न्यायालयों का भी यही निष्कर्ष है । उदाहरणार्थ, मुंबई उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अंतिम डिक्री का आवधारण करने के लिए बालक का कल्याण, माता-पिता द्वारा जो दलीलें दी गई हैं, उनको विचार में लिए बिना, सर्वोपरि विचारण होती है ।[1] उच्चतम न्यायालय द्वारा यह कथन किया गया है कि किसी बालक के कल्याण को मात्र धन अथवा भौतिक आराम द्वारा नहीं मापा जाना चाहिए बल्कि 'कल्याण' शब्द को उसके इस व्यापक अर्थ के रूप में लिया जाना चाहिए कि स्नेह के बंधन की अनदेखी नहीं की जा सकती है।[2] वर्षों से, अपरक्राम्य का सिद्धान्त, जिसके आधार पर बालक की अभिरक्षा के मामलों का विनिश्चय किया जाता है, "बालक के सर्वोत्तम हित और कल्याण" का सिद्धान्त है जिसके द्वारा प्रत्येक बालक या बालिका को जीते रहने और अपनी पूर्ण अंतःशक्ति को पाने में समर्थ बनाने का प्रयास किया गया है ।[3]

1.2 इसकी सुसंगत विचारणा के रूप में व्यापक मान्य होने के बावजूद इसकी रीति में, जिसमें कल्याण संबंधी सिद्धान्त हमारे विधिक और न्यायिक ढांचे में व्याप्त है, कुछ समस्याएं हैं जिनको विधायी आधार पर दूर किए जाने की जरुरत है । सर्वप्रथम, इस सिद्धान्त को अभिरक्षा और संरक्षकता को विनियमित करने संबंधी भिन्न-भिन्न विधानों द्वारा जो प्रासंगिकता दी गई है, उसमें असमानता है । दूसरे, इस विषय में अनिश्चितता और न्यायिक मतैक्य का अभाव है कि बालक के कल्याण से यथार्थतः क्या गठित होता है, जिसके परिणामस्वरूप अभिरक्षा संबंधी लड़ाइयां क्रूरतापूर्वक लड़ी जाती हैं, इसमें यह सुनिश्चित करने के कि बालक के हितों की वस्तुतः संरक्षा हो,

---

[1] कारला गैनन्न बनाम शहबाज फारुख अल्लाराखिया, बम्बई उच्च न्यायालय, 2009 की दांडिक रिट याचिका सं0 509

[2] नील रतन कुंडु बनाम अभिजीत कुंडु एआईआर 2009 एससी (अनु0) 732

[3] सिद्धान्त 4, नियम 3, किशोर न्याय (बालकों की देखभाल और संरक्षण) नियम, 2007

कोई मार्ग नहीं हैं । तीसरे, विधिक ढांचा इस विषय पर मौन है कि अभिरक्षा के मुद्दों को किस पर निपटाया जाना चाहिए, इसमें विनिश्चय करने में कौन से कारक सुसंगत होने चाहिए और अन्य विवादों के साथ-साथ माता-पिता तथा बालकों के बीच के विवाद के समाधान की प्रक्रिया कौन सी होनी चाहिए । चौथे, इसमें यद्यपि, अभिरक्षा को शासित करने संबंधी कोई संहिताबद्ध नियम नहीं है, तथापि, इस क्षेत्र में विनिश्चय करने की प्रक्रिया इस अवधारणा पर आधारित होती है कि बालक का कल्याण आवश्यक रूप से माता-पिता में से किसी एक को तुलनात्मक रूप से निर्धारित रूप में दी जा रही अभिरक्षा में निहित है ।

1.3 विधि आयोग की इस रिपोर्ट में अभिरक्षा और संरक्षकता से संबंधित वर्तमान विधियों अर्थात् संरक्षकता और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 और हिन्दू अप्राप्तव्यता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 का पुनर्विलोकन किया गया है और निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विधायी संशोधनों की सिफारिश की गई है :

- संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 में के कल्याण संबंधी सिद्धान्त को सुदृढ़ बनाना और संरक्षक तथा अभिरक्षा से संबंधित विनिश्चय करने के प्रत्येक पहलू में इसकी प्रासंगिकता पर बल देना ।

- संरक्षकता और अभिरक्षा के संबंध में माता और पिता, दोनों, को समान विधिक प्रास्थिति देना ।

- विनिश्चय करने वालों की यह निर्धारित करने में सहायता करने के लिए विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धान्तों का उपबंध करना कि किस अभिरक्षा और संरक्षकता संबंधी व्यवस्था से बालक की विनिर्दिष्ट स्थितियों में कल्याण होगा ।

- माता और पिता, दोनों, को ऐसी कतिपय परिस्थितियों में संयुक्त अभिरक्षा दिए जाने के विकल्प का, जो बालक के कल्याण में सहायक हो, उपबंध करना ।

अ. "बालक का कल्याण" : ऐतिहासिक क्रमविकास

1.4.1 कामन ला में पारंपरिक रूप से, पिता को बालक का तथा उसकी संपत्ति का एक मात्र संरक्षक माना जाता था । बालक के जीवन के प्रत्येक पहलू में जिसके अन्तर्गत उसका आचरण, शिक्षा, धर्म और भरण-पोषण भी है, पिता के प्राधिकार को आत्यंतिक माना जाता था और यहां तक कि न्यायालय भी उसमें हस्तक्षेप करने से इनकार कर देते थे । माता का बालकों पर कोई प्राधिकार नहीं होता था क्योंकि

माताओं की अपनी स्वतंत्र विधिक प्रास्थिति नहीं होती थी, उनकी पहचान विवाह उपरांत उनके पतियों के पहचान के साथ जोड़ दी जाती थी । जैसे ही विवाह-विच्छेद संभव हो गया और माताओं ने अपना स्वतंत्र विधिक अस्तित्व और आवास बनाना आरंभ कर दिया, उनको बालकों की अभिरक्षा रखने का, अधिकार न सही कम से कम दावा तो न्यायालयों द्वारा माना जाने लगा । तथापि, अनेक विधानों जैसे कि आरंभ में यू.के. में कस्टडी आफ इन्फेंट्स ऐक्ट आरंभ हुए, जो कि माता को अयस्क बालकों की अभिरक्षा का दावा करने में समर्थ बनाता है, के बावजूद पिता के अधिकार सर्वोपरि बने रहे ।

1.4.2 इंग्लिश विधि के अधीन बालकों पर पितृत्व के प्राधिकार को खत्म करने में दो गतिविधियां सहायक हुईं । प्रथम, अनेक न्यायिक विनिश्चयों में, न्यायालयों ने पिता की प्राकृत संरक्षकता को अधिक्रांत करने तथा इस बात पर निर्भर करते हुए कि बालक के कल्याण की अभिवृद्धि किससे है, अभिरक्षा प्रदान करने के लिए माता और पिता, दोनों, की अधिकारिता यहां तक कि राज्य के उच्चतर पैतृक प्राधिकार पर जोर दिया ।[4] दूसरे अनेक विधानों के माध्यम से, ब्रिटिश पार्लियामेंट में पितृत्व अधिकारों से हटकर बालक के कल्याण पर बल दिया गया और संरक्षकता तथा अभिरक्षा का अवधारण किए जाने में पिता और माता को समान विधिक प्रास्थिति प्रदान की गई । कस्टडी आफ इन्फेंट्स ऐक्ट (शिशु अभिरक्षा अधिनियम), 1873 में माता को बालक की अभिरक्षा, उसके सौलह वर्ष की आयु होने तक रखे जाने को अनुज्ञात किया गया और उन माताओं द्वारा, जिन्होंने जारकर्म किया हो, की गई याचिकाओं पर के निर्बंधन को हटा दिया गया था । गार्डियनशिप आफ इन्फेंट्स ऐक्ट (शिशु संरक्षकता अधिनियम), 1886 में वसीयती संरक्षक की अभिरक्षा, पहुंच और नियुक्ति पर माता के समान अधिकार होने की बात स्वीकार की गई और न्यायालय को कतिपय परिस्थितियों में संरक्षक नियुक्त करने और उन्हें हटाने के लिए अनुज्ञात किया गया था । गार्डियनशिप आफ इन्फेंट्स ऐक्ट (शिशु संरक्षकता अधिनियम), 1925 में, अभिरक्षा संबंधी विवाद में, माता और पिता के दावों को बराबर माना गया और उसमें यह उपबंध किया गया कि शिशु का कल्याण 'प्रथम और सर्वोपरि विचारणीय बात' होगी । अन्ततः, गार्डियनशिप आफ माइनर्स ऐक्ट (अवयस्क संरक्षकता अधिनियम), 1973 में माता को भी वही अधिकार प्रदान किए गए जो कि कामन ला में पिता को दिए गए थे, माता को इन अधिकारों का प्रयोग पिता की सहमति के बिना करने के लिए अनुज्ञात किया गया था । यदि माता-पिता किसी सहमति पर पहुंचने में असफल रहते हैं तो इसमें न्यायालय को बालक के कल्याण के सिद्धान्त के आधार पर मामले का विनिश्चय करने के लिए प्राधिकृत किया गया है ।

---

[4] इनरि, ओ हारा, (1990) 2 आई.आर. 232.

1.4.3 भारत में, संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम औपनिवेशिक राज्य द्वारा 1890 में अधिनियमित किया गया था, जिसमें कामन ला की बालकों की संरक्षकता और अभिरक्षा में पैतृक अधिकार की सर्वोच्चता की बपौती को बनाए रखा गया है यद्यपि, अधिनियम की धारा 7 और धारा 17 में यह उपबंधित है कि न्यायालयों को अप्राप्तवय के कल्याण को अग्रसर करने में कार्य करना चाहिए, तथापि, मूल अधिनियम की धारा 19 और धारा 25 में इसी को पिता की सर्वोचता के अधीनस्थ किया गया है । केवल हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 में, जो कि स्वतंत्र भारतीय राज्य द्वारा अधिनियमित किया गया था, यह उपबंधित है कि अप्राप्तवय का कल्याण ही, अन्य सभी कारकों को अधिक्रांत करते हुए, सर्वोपरि विचारणीय बात होगी । इस विधिक ढांचे पर इस रिपोर्ट के अध्याय 2 में विस्तारपूर्वक विचार-विमर्श किया गया है ।

आ. अन्तरराष्ट्रीय मानव अधिकार विधि में "बालक का सर्वोत्तम हित"

1.5.1. यद्यपि "बालक का कल्याण" संबंधी सिद्धान्त की घरेलू विधिक ढांचे में प्रधानता है, तथापि, अन्तरराष्ट्रीय मानव अधिकार विधि में इसके तुलनात्मक विधिक मानकों का उल्लेख है । बालक अधिकार संबंधी संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन (जिसे इसमें इसके पश्चात् सीआरसी कहा गया है) के अनुसार, बालकों से संबंधित सभी कार्रवाइयां, चाहे वे लोगों द्वारा या प्राइवेट सामाजिक कल्याण संस्थाओं द्वारा, न्यायालयों, प्रशासनिक प्राधिकारियों या विधायी निकायों द्वारा की गई हों, उनमें बालक के सर्वोत्तम हित प्राथमिक विचारणीय बात रहेंगे ।[5] कन्वेंशन में राज्य पक्षकारों को यह सुनिश्चित करने का निदेश दिया गया है कि "बालकों के पालन-पोषण और विकास का समान उत्तरदायित्व माता-पिता दोनों का है ।[6] सीआरसी में यह उपबंधित है कि बालक को अपने माता-पिता से अलग कर दिया जाना चाहिए यदि "माता-पिता द्वारा बालक की उपेक्षा की गई हो या जहां माता-पिता अलग-अलग रह रहे हों और विनिश्चय बालक के निवास-स्थान के बारे में किया जाना चाहिए" ।[7] बालक का कल्याण, विनिश्चय संबंधी मापदंड के रूप में, साधारणतया लचीला, अनुकूलनीय और समाज के कुटुंब के बारे में समयकालिक मनःस्थिति का प्रतिबिंब होता है ।"[8]

---

[5] बालक के अधिकारों से संबंधित कन्वेंशन, अनुच्छेद 3 (1989) .

[6] यथोक्त, अनुच्छेद 18.

[7] यथोक्त, अनुच्छेद 9.

[8] गिलमोर, स्टेफन, ग्रेट डिबेट्स : फैमली ला, पालग्रेव मैकमिलन (2014) पृष्ठ 76-83.

1.5.2 बालक अधिकार समिति ने अपनी साधारण टीका-टिप्पण में सर्वोत्तम हित मानक के बारे में अतिरिक्त मार्गदर्शक सिद्धान्त दिए हैं ।[9] समिति ने यह कथन किया है कि "उन तत्वों की, जो ऐसे किसी विनिश्चयकर्ता द्वारा, जिसने बालक के सर्वोत्तम हितों का अवधारण करना हो, सर्वोत्तम हित निर्धारण में सम्मिलित किया जा सकता है, असर्वांगीण और गैर सोपान-क्रमिक सूची तैयार करना उपयोगी होता है ।"[10] समिति ने यह सुझाव दिया कि निम्नलिखित विचारणाएं सुसंगत हो सकती हैं : बालक की पहचान (जैसे कि लिंग, लैंगिक अनुस्थापन, राष्ट्रीय उद्भव, धर्म और विश्वास, सांस्कृतिक पहचान और व्यक्तित्व); पारिवारिक वातावरण का परिरक्षण और धर्म को बनाए रखना (जिसके अन्तर्गत, जहां कहीं समुचित हो, विस्तारित कुटुंब अथवा समुदाय भी है) ; बालक की देखरेख, संरक्षा और सुरक्षा ; दुर्बलता (निःशक्तता, अल्पसंख्यक प्रास्थिति, निराश्रयता, दुर्व्यवहार का शिकार, आदि) की कोई स्थिति,); और बालक का स्वास्थ्य का अधिकार और शिक्षा का अधिकार ।[11] किन्तु सर्वोत्तम हित मानक की, जब उसे अभिरक्षा संबंधी, विवाघकों में लागू किया जाता है, दो मुख्य सीमाएं हैं ।

1.5.3. सर्वप्रथम, यह अप्रत्याशित और सूचना बोघक है । ऐसे माता-पिता, जो विवाह-विच्छेद चाह रहे हैं, इस बात का अनुमान लगाते रहते हैं कि न्यायालय किस प्रकार अभिरक्षा संबंधी विनिश्चय करेंगे इससे न्यायालय के पूर्व की अनावश्यक सौदे-बाजी होती है जो कि बालक और माता-पिता, दोनों के लिए हानिकार हो सकती है ।[12] इसे एक ऐसे अति प्रत्याशित नियम-आधारित मानक के आधार पर सुलझाया जा सकता है जिसमें सर्वोत्तम हित मानक की अन्तर्वस्तु का उल्लेख है । दूसरी ओर, नियम आधारित मानक संभवतः कठोर होता है और उसे प्रत्येक मामले की व्यक्तिगत परिस्थितियों के अनुसार नहीं लिया जाता है ।[13] दूसरे, बालक के सर्वोत्तम हित मानक में मुख्यतया केवल बालक की अवस्था पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है और उसमें माता-पिता की भावनाओं और हितों पर विचार नहीं किया जाता है । माता-पिता भी कुटंब के भीतर कर्ता होते हैं, उनके भी अधिकार होते हैं और उनके कल्याण हेतु भी एक विधिक ढांचे पर ध्यान दिया जाना चाहिए ।[14] इस प्रकार, यह

---

[9] बालक के अधिकारों पर बालक अधिकार समिति, साधारण टीका-टिप्पण सं0 14- बालक या बालिका के सर्वोत्तम हितों को मुख्य विचारणीय बात के रूप में लिया जाना (अनु0 3, पैरा 1), यूएन डाक. सीआरसी/सी/जीसी/14 (मई 29/2013)

[10] साधारण टीका-टिप्पण 14, पैरा 50

[11] यथोक्त, पैरा 52-79

[12] यथोक्त

[13] यथोक्त

[14] साधारण टीका-टिप्पण 14, पैरा 52-79.

एक खुला प्रश्न है कि क्या बालक की अभिरक्षा के विनिश्चयों के लिए बालक का सर्वोत्तम हित मानक का विधिक उपकरण पर्याप्त है या इसके साथ अतिरिक्त विधायी मार्गदर्शक सिद्धान्त भी विहित किए जाने की जरूरत है ।

इ. संयुक्त अभिरक्षा

1.6.1 बालक अभिरक्षा व्यवस्थाओं के रूप में परिवर्तन हो रहा है । विश्व के अनेकानेक देशों ने बालक के संबंध में, विवाह-विच्छेद के पश्चात् की व्यवस्थाओं के रूप में, एकल अभिरक्षा की अपेक्षा माता-पिता की सम्मिलित पद्धतियों को अधिमान को अपनाया है ।[15] पश्चिमी देशों में, यह प्रवृति मुख्यतया कौटुम्बिक भूमिकाओं में परिवर्तन (पुरुष देखरेखकर्ता बालक की भरण-पोषण की अधिक जिम्मेदारियां ले रहे हैं) से तथा मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से पैदा हुई है जिनसे यह पता चलता है कि बालक के लालन-पालन में मता-पिता, दोनों, द्वारा ध्यान दिया जाना एकल अभिरक्षा व्यव्सथाओं की अपेक्षा अधिक श्रेयस्कर समझा गया है । अध्ययनों से यह उपदर्शित होता है कि बालक साधारणतया, तब अधिक बेहतर बसर करते हैं, जब माता-पिता अभिरक्षा को आपस में बांट लेते हैं और कुछ देशों में कुछ अधिकारिताओं में विधिक रूप से संयुक्त अभिरक्षा की उपधारणा को विहित किया गया है ।[16] तथापि, विद्वतजनों और न्यायालयों ने इस बात के लिए सचेत किया है कि संयुक्त अभिरक्षा की उपधारणा "बालकों के सर्वोत्तम हितों" के विपरीत जा सकती है, विशेषकर घरेलू हिंसा के मामलों में जहां कि त्रासित महिलाएं और हिंसा के भय से संयुक्त अभिरक्षा के लिए सहमत हो सकती हैं ।[17]

1.6.2 नवम्बर, 2014 में, भारत के विधि आयोग ने (जिसे इसमें इसके पश्चात् आयोग कहा गया है) भारत में पालन-पोषण की संयुक्त पद्धति को अपनाए जाने संबंधी परामर्श पत्र (जिसे इसमें इसके पश्चात् परामर्श पत्र कहा गया है) जारी किया

---

[15] ग्लोवर, आर एंड स्टील, सी., जिसमें बालक पर विवाह-विच्छेद के पश्चात् के प्रबंधन का प्रभाव समाविष्ट है, जरनल आफ डाइवोर्स, जिल्द 12 सं0 2-3 (1989)

[16] यूनाइटेड स्टेट के अनेक राज्यों में यह उपबंध है । देखिए इदाहो कोड एन0 § 32-717बी (4) ("इस धारा की उपधारा (5) में यथा उपबंधित के सिवाय प्रतिकूल साक्ष्य की अधिसंभाव्यता के अभाव में यह उपधारणा की जाएगी कि संयुक्त अभिरक्षा अवयस्क बालक या बालकों के सर्वोत्तम हित में है") मीन स्टैट एन॰ 518.17(2)(ख) ("इसके विपरीत न्यायालय की यह उपधारणा है कि भिन्न किसी एक या दोनों पक्षकारों के अनुरोध पर संयुक्त विधिक अभिरक्षा बालक के सर्वोत्तम हित में होगी ।")

[17] विधायी सेवा विभाग, बालक अभिरक्षा : संयुक्त अभिरक्षा उपधारणा की पृष्ठभूमि और नीति विवक्षाएं 6(2011)("घरेलू हिंसा के पीड़ितों के अधिवक्ताओं द्वारा विधि में संयुक्त अभिरक्षा की उपधारणा का तीव्र विरोध किया गया ।")

था ।[18] परामर्श पत्र में पालन-पोषण की संयुक्त पद्धति का अनेक देशों में, जिसमें यूनाइटेड स्टेट्स, कनाडा, आस्ट्रेलिया, यूनाइटेड किंगडम, दक्षिण अफ्रीका, नीदरलैंड, थाईलैंड, सिंगापुर और केन्या भी हैं, सर्वेक्षण किया गया था । परामर्श पत्र के पद्धति संबंधी अध्ययनों से विवाह-विच्छेद के बाद के अभिरक्षा संबंधी व्यवस्थाओं के प्रति विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों का उल्लेख किया गया है । परामर्श पत्र का बालक अभिरक्षा के बारे में भारत की विद्यमान विधि, जिसके अन्तर्गत संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 और हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 भी है, का तथा उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के सुसंगत विनिश्चयों का पुनर्विलोकन किया गया था और यह निष्कर्ष निकाला गया कि भारत में अभिरक्षा संबंधी विधि में उस बिन्दु को अपनाया गया है जहां कि माता-पिता को सम्मिलित पालन-पोषण के विचार पर विचार-विमर्श आरंभ करना उपयुक्त है । उस अनुक्रम में, परामर्श पत्र में माता-पिता के सम्मिलित पालन-पोषण से संबंधित प्रश्न दिए गए और उनसे टिप्पणियां आंमत्रित की गई थीं ।

ई. आयोग द्वारा प्राप्त उत्तरों का सारांश

1.7.1 प्राप्त 125 उत्तरों में से, अधिकांश उत्तर सम्मिलित अभिरक्षा के पक्ष में थे । इस संबंध में जो कुछ कारण दिए गए थे वे इस प्रकार हैं :

- बालकों को अपनी माता और अपने पिता दोनों की ही जरुरत होती है–वे भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में मात-पिता में से हरेक की सलाह चाहते हैं ।
- बालकों को माता-पिता में से हरेक से जुड़ने के पर्याप्त अवसरों की जरुरत होती है ।
- सम्मिलित विधिक अभिरक्षा के बिना सम्मिलित भौतिक अभिरक्षा से बालक यह विश्वास करने लगेगा कि माता-पिता का समान नैतिक प्राधिकार नहीं है । सम्मिलित भौतिक अभिरक्षा के बिना सम्मिलित विधिक अभिरक्षा से बालक माता-पिता, दोनों, के साथ संबंध बनाने से वंचित हो जाएगा ।
- सम्मिलित अभिरक्षा से माता-पिता के बीच के मनमुटाव में कमी आएगी ।

---

[18] उक्त कागज-पत्र http://lawcommissionofindia.nic.in/Consultation%20Paper%20on%20Shared%20Parentage.pdf. पर उपलब्ध है ।

- कुछ महिलाएं, बालकों को उनके पिता से लेने के लिए महिला घरेलू हिंसा सरंक्षा अधिनियम, 2005 और भारतीय दंड संहिता की धारा 498क की संरक्षाओं का दुरूपयोग करती हैं । किन्तु, सम्मिलित अभिरक्षा व्यवस्था में, केवल बालक से दुर्व्यवहार, उसकी उपेक्षा या मानसिक रुग्णता की दशा में माता-पिता को उससे संपर्क रखने से रोका जाएगा । बालकों को, इस बात को विचार में लिए बिना कि माता-पिता में सुलह या नहीं, माता-पिता, दोनों, से संपर्क बनाना चाहिए ।

- लिंग आधारित स्थिर धारणा–उदाहरणार्थ यह कि बालिका का पालन-पोषण माता द्वारा और बालक का पालन-पोषण पिता द्वारा किया जाना चाहिए– अब पुरानी हो गई है । माता-पिता, दोनों, का ही बच्चों के, चाहे वे बालिका हो या बालक, लालन-पालन में मूल्यवान योगदान होता है ।

1.7.2 सम्मिलित पालन-पोषण के विरुद्ध भी कुछ कारण दिए गए, जो कि इस प्रकार हैं :

- विवाह-विच्छेद की कार्यवाहियों के दौरान, पति अपनी पत्नियों से भरण-पोषण भत्ता न लेने अथवा दांडिक कार्यवाहियां वापस लेने हेतु दबाव डालने के लिए बालक की अभिरक्षा का प्रयोग करते हैं ।

- बालकों को दो घरों के बीच डुलाना अच्छा नहीं है । एक स्थायी, सुव्यवस्थित घर एक सर्वोत्तम विकल्प है ।

- पितृशासित समाज में, जहां कि महिलाओं और बच्चों को प्रायः तंग किया जाता है, बालक की सुरक्षा सुनिश्चित करना एक समस्या हो सकती है ।

- जहां माता-पिता के बीच अनसुलझे प्रश्न हैं, वहां वे बालक के लिए संयुक्त विनिश्चय लिए जाने पर सहमत नहीं हो पाएंगे ।

- भारत में आवश्यक समर्थकारी उपाय नहीं है जैसे कि वैवाहिक संपत्ति को विभाजित करने, दापंत्य घर में रहने के अधिकार, देखरेख करने वाले पति/पत्नी की भावी सुरक्षा के लिए वित्तीय योजना, और बालकों के लिए आश्रय स्थलों संबंधी विधियां नहीं है ।

- इसका महिलाओं को तंग करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है ।

1.7.3 अनेक प्रतिवादियों ने ये सुझाव दिए कि भारत में पालन-पोषण की सम्मिलित प्रणाली को किस प्रकार क्रियान्वित किया जा सकता है :

- न्यायालयों के पास अभिरक्षा संबंधी विवादों का न्यायनिर्णयन करने के लिए उपयुक्त व्यवस्था नहीं है । इसके बजाय, मध्यस्थ केन्द्र स्थापित किए जाने चाहिए जिनमें बालकों और नातेदारी से संबंधित मुद्दों पर पक्षकारों को सलाह देने के लिए प्रशिक्षित लोगों को लगाया जाना चाहिए वकीलजन इस स्थिति को और खराब कर देंगे ।

- माता-पिता को एक "पालन-पोषण की योजना" प्रस्तुत करनी चाहिए जिसमें उनका व्यक्तिगत प्रोफाइल, शैक्षिक अर्हता, निवास-स्थान और दोनों पक्षकारों की आय का उल्लेख हो ।

- माता-पिता, दोनों, को एक संयुक्त खाता खोलना चाहिए जिससे बालक के खर्चों के लिए प्रयोग किया जा सके ।

उ. वर्तमान रिपोर्ट :

1.8 परामर्श पत्र के संबंध में अनेक उत्तर प्राप्त करने के पश्चात्, आयोग द्वारा एक उपसमिति बनाई गई जो निम्नलिखित से मिलकर बनी थी : न्यायमूर्ति अजित प्रकाश शहा, अध्यक्ष; प्रो0 मूलचन्द शर्मा, सदस्य, भारत का विधि आयोग ; प्रो0 योगेश त्यागी और श्री आर. वेंकटरम्मानी, अंशकालिक सदस्य, भारत का विधि आयोग ; सुश्री दिपिका जैन, सह आचार्य और श्री सप्तऋषि मंडल, सह-आचार्य, जिदंल ग्लोबल ला स्कूल । समिति द्वारा विकासशील और विकसित, दोनों, देशों में सम्मिलित अभिरक्षा से संबंधित विधिक उपबंधों का सर्वेक्षण किया गया जिसमें, विशिष्टतया, उन परिस्थितियों पर, जिनमें संयुक्त अभिरक्षा दी जाती है या उसका वर्जन किया जाता है, पालन-पोषण योजनाओं; और मध्यस्थता पर ध्यान संकेन्द्रित किया गया था । इसके अतिरिक्त, बालक अभिरक्षा के विषय में विधि विशेषज्ञों, विधि व्यवसायियों और अन्य कर्ताओं के साथ अनेक वैठकों के माध्यम से, समिति ने भारत में माता-पिता की सम्मिलित अभिरक्षा की संकल्पना की प्रकृति और व्याप्ति की रूपरेखा प्रस्तुत की और वर्तमान विधि में उन उपबंधों की पहचान की जिनका कि संशोधन किए जाने की जरूरत है । इसमें समिति को सुश्री सुमत्ति चन्द्रशेखरन्, परामर्शी भारत का विधि आयोग ; श्री ब्रायान ट्रानिक, सुश्री उपासना गरनायक और सुश्री किमबर्ले रोटन, सहायक आचार्य, जिदंल ग्लोबल ला स्कूल ; और सुश्री मधुवंती राजकुमार, सुश्री स्मृति शर्मा और श्री प्रणय लेखी, अनुसंधानकर्ता, भारत का विधि आयोग द्वारा सहायता प्रदान की गई । समिति द्वारा न्यायमूर्ति (श्रीमती) मंजू गोयल, सेवानिवृत्त न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय और सुश्री लैला ओलापल्ली, सेंटर फार एडवान्सड मेडिएशन प्रेक्टिस, बंगलौर द्वारा दिए गए मूल्यवान् सुझावों और जानकारी के प्रति भी अपना आभार प्रकट करती है ।

अध्याय 2

भारत में अभिरक्षा और संरक्षकता को शासित करने संबंधी विधिक ढांचा

2.1 बालकों की अभिरक्षा को शासित करने संबंधी विधि को करीब-करीब उससे जोड़ा जाता है जो कि संरक्षकता को शासित करती है । संरक्षकता उन अधिकारों और शक्तियों के समूह के प्रति निर्देश करती है जो कि एक वयस्क को एक अवयस्क के शरीर और संपत्ति के संबंध में प्राप्त है, जबकि अभिरक्षा, अप्राप्तवय (अवयस्क) के भरण-पोषण और दिन प्रतिदिन की देखरेख और नियंत्रण से संबंधित एक संकुचित संकल्पना है । 'अभिरक्षा' पद को किसी भी भारतीय कुटुंब विधि में, चाहे वह धर्म निरपेक्ष हो या धार्मिक, परिभाषित नहीं किया गया है । 'संरक्षक' पद को संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 में (जिसे इसमें इसके पश्चात् संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम कहा गया है) "ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है जो अप्राप्तवय के शरीर की या उसकी संपत्ति की, या उसके शरीर और संपत्ति दोनों की देखरेख करता है ।"[19] विधि द्वारा जो एक अन्य पद का प्रयोग किया गया है वह है "नैसर्गिक संरक्षक"; नैसर्गिक संरक्षक ऐसा व्यक्ति है, जिसे अप्राप्तवय का संरक्षक होने की विधिक रूप से उपधारणा की जाती है और जिसे अप्राप्तवय की ओर से सभी विनिश्चय करने के लिए प्राधिकृत होने की उपधारणा की जाती है। अभिरक्षा और संरक्षकता (अथवा नैसर्गिक संरक्षकता) के बीच के विधिक अन्तर का निम्नलिखित उदाहरण के द्वारा दृष्टांत दिया जा सकता है : कुछ धार्मिक स्वीय विधियों के अधीन, अति युवा बालकों के लिए, माता को अभिरक्षक होने का अधिमान दिया जाता है, किन्तु पिता सदैव नैसर्गिक संरक्षक बना रहता है ।

अ. कानूनी विधि

(i) संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890

2.2.1 संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर सभी बालकों के लिए, उनके धर्म को विचार में लिए बिना, सरंक्षकता और अभिरक्षा के प्रश्नों को विनियमित करने संबंधी एक धर्मनिरपेक्ष विधि है । इसमें, जिला न्यायालयों को किसी अप्राप्तवय के शरीर या संपत्ति का संरक्षक नियुक्त करने के लिए प्राधिकृत किया गया है, जब अप्राप्तवय की स्वीय विधि के अनुसार नैसर्गिक संरक्षक या किसी विल के अधीन नियुक्त किया गया वसीयती संरक्षक अप्राप्तवय के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने में असफल रहता है । अधिनियम एक ऐसी पूर्ण संहिता है जिसमें संरक्षकों के अधिकारों और बाध्यताओं, उनको हटाने या प्रतिस्थापित करने की प्रक्रिया और उनके द्वारा, आचार की दशा में, उपचारों की अधिकथित किया गया है ।

---

[19] § 4(2), जी डब्ल्यू ए ।

यह एक आवश्यक विधान है जिसमें प्रत्येक धर्म के अधीन संरक्षकता संबंधी मुद्दों को शासित करने वाली स्वीय विधियां जोड़ी गई हैं ।[20] यदि किसी कतिपय मामले में मूल विधि को पक्षकारों की स्वीय विधि में लागू किया जाता है तो भी प्रक्रियात्मक विधि लागू होती है जो कि संरक्षक और प्रतिपाल्य विधि में अधिकथित है ।[21]

2.2.2 संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम की धारा 7 में न्यायालय को अप्राप्तवय के शरीर या संपत्ति या दोनों के लिए, यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि "अप्रापतवय के कल्याण" के लिए ऐसा करना आवश्यक है, संरक्षक नियुक्त करने के लिए प्राधिकृत किया गया है ।[22] धारा 17 में उन कारकों को अधिकथित किया गया है जिन पर न्यायालय द्वारा संरक्षकों की नियुक्ति करते समय विचार किया जाएगा ।[23] धारा 17(1) में यह कथित है कि न्यायालय उन बातों द्वारा मार्गदर्शित होगा जो अप्राप्तवय की स्वीय विधि में उपबंधित है और जो मामले की परिस्थितियों में "अप्राप्तवय के कल्याणकर" प्रतीत हों ।[24] धारा 17(2) में यह स्पष्ट किया गया है कि इस बात का अवधारण करने में कि अप्राप्तवय के लिए क्या कल्याणकर होगा, न्यायालय अप्राप्तवय की आयु, लिंग और धर्म, प्रस्थापित संरक्षकशील और सामर्थ्य तथा अप्राप्तवय से प्रस्तावित संरक्षक की रक्त संबंध में उसकी निकटता, मृत जनक की इच्छाओं को, यदि कोई हों, और अप्राप्तवय से या उसकी संपत्ति से प्रस्थापित संरक्षक के किसी वर्तमान या पूर्वतम संबंधों पर ध्यान देंगे ।[25] धारा 17(3) में यह कथित है कि यदि अप्राप्तवय इतनी आयु का है कि या बुद्धिमत्तापूर्ण अधिमान कर सकता है तो न्यायालय उसके अधिमान पर विचार "कर सकेगा" ।[26]

2.2.3 संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम की धारा 19 उन मामलों के संबंध में है जहां कि न्यायालय संरक्षक की नियुक्ति नहीं कर सकेगा ।[27] धारा 19(ख) में यह कथन है कि न्यायालय किसी अप्राप्तवय के शरीर का, जिसका पिता या जिसकी

---

[20] उदाहरण के लिए, हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम की धारा 2 में यह कथन किया गया है कि इसके उपबंध संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अनुपूरक हैं न कि उसके अल्पीकरण में ।

[21] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 6 ("अप्राप्तवय की दशा में इस अधिनियम की किसी बात का यह अर्थ न लगाया जाएगा कि वह उसके शरीर या संपत्ति या दोनों का संरक्षक नियुक्त करने की किसी ऐसी शक्ति को लेती है, जिसके वह अप्राप्तवय अध्यधीन है ।")

[22] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 7

[23] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 17

[24] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 17(1)

[25] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 17(2)

[26] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 17(3)

[27] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 19

माता जीवित है और जो न्यायालय कीराय में संरक्षक होने के अयोग्य नहीं है, संरक्षक नियुक्त करने के लिए प्राधिकृत नहीं है ।[28] पूर्व में, न्यायालय को उस दशा में यदि अप्राप्तवय का पिता जीवित है, संरक्षक नियुक्त करने से निवारित किया गया था । इस खंड को स्वीय विधि (संशोधन) अधिनियम, 2010 द्वारा संशोधित किया गया था और उसे उन मामलों में भी लागू किया गया था जहां कि माता भी जीवित हो, इस प्रकार पिता की अधिमानी स्थिति को खत्म कर दिया गया ।[29]

2.2.4 संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम की धारा 25 प्रतिपाल्य की अभिरक्षा पर संरक्षक के हक के बारे में है ।[30] धारा 25(1) में यह कथित है कि यदि प्रतिपाल्य अपने शरीर के संरक्षक की अभिरक्षा को छोड़ देता है या उससे हटा दिया जाता है तो यदि न्यायालय इस राय का है कि प्रतिपाल्य के लिए यह कल्याणकर होगा कि वह संरक्षक की अभिरक्षा में लौट आए तो वह उसके लौट आने के लिए अपेक्षा कर सकेगा ।[31]

2.2.5 पूर्वोक्त उपबंधों का एक साथ परिशीलन करने से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अधीन किसी अप्राप्तवय के शरीर या संपत्ति का संरक्षक नियुक्त करने में अप्राप्तवय/प्रतिपाल्य के कल्याण की बात से मार्गदर्शित होगा । यह धारा 7 और धारा 17 की भाषा से स्पष्ट है । इसके साथ ही, धारा 19(ख) से यह विवक्षित होता है कि जब तक न्यायालय पिता या माता को विशिष्टतया संरक्षक होने के लिए अयोग्य न पाए, वह किसी को भी संरक्षक के रूप में नियुक्त करने के अपने प्राधिकार का प्रयोग नहीं कर सकता है । इस प्रकार, न्यायालय की अप्राप्तवय के कल्याण को अग्रसर करने में कार्य करने की शक्ति में माता-पिता के संरक्षक के रूप में कार्य करने के प्राधिकार का सम्मान किया जाना चाहिए ।

(ii) हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956

2.2.6 प्रतिष्ठित हिन्दू विधि में बालकों की संरक्षकता और अभिरक्षा से संबंधित सिद्धान्त नहीं है । संयुक्त हिन्दू कुटुंब में, कर्ता सभी अश्रितों और उनकी संपत्ति के प्रबंधन के समग्र नियंत्रण के लिए उत्तरदायी होता है और इसलिए संरक्षकता और

---

[28] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 19(ख)

[29] स्वीय विधि (संशोधन) अधिनियम, 2010 का 30 § 2

[30] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 25

[31] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 25(1)

अभिरक्षा से संबंधित विनिर्दिष्ट विधिक नियम आवश्यक नहीं समझे गए थे ।[32] तथापि, आधुनिक कानूनी हिन्दू विधि, हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 (जिसे इसमें इसके पश्चात् हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम कहा गया है) में "यह उपबंधित है कि पिता अप्राप्तवय का नैसर्गिक संरक्षक होता है और उसके पश्चात् माता नैसर्गिक संरक्षक होती है । हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम की धारा 6(क) में यह उपबंधित है कि–

> (1) किसी अप्राप्तवय लड़के या अविवाहित लड़की की दशा में पिता नैसर्गिक संरक्षक होता है और 'उसके पश्चात्' माता नैसर्गिक संरक्षक होती है ; और
>
> (2) ऐसे अप्राप्तवय की, जिसने पांच वर्ष की आयु पूरी नहीं कर ली हो, अभिरक्षा 'मामूली तौर पर' माता के हाथ में होगी (कोट किए गए शब्दों पर बल दिया गया है) ।

2.2.7 **गीता हरिहरण बनाम भारतीय रिजर्व बैंक**[33] वाले मामले में, धारा 6(क) की सांविधानिक विधिमान्यता को यह चुनौती दी गई थी कि इससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के अधीन लिंग की समानता की गारंटी का अतिक्रमण होता है । उच्चतम न्यायालय ने 'उसके पश्चात्' शब्दों के अर्थ पर विचार किया और इस बात की परीक्षा की कि क्या 'कानून की स्कीम के अनुसार, माता-पिता के जीवनकाल के दौरान नैसर्गिक संरक्षक होने की हकदार नहीं है । न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि 'उसके पश्चात्' पद का निर्वचन इस सिद्धान्त को कि अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात है और पुरूष और महिला के बीच समता के सांविधानिक समादेश को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 6(क) में 'उसके पश्चात्' पद का निर्वचन इस रूप में नहीं किया जाना चाहिए जिसका अर्थ 'पिता के जीवनकाल के पश्चात्' हो बल्कि इसका अर्थ 'पिता की अनुपस्थिति' के रूप में लगाया जाना चाहिए, न्यायालय ने यह और विनिर्दिष्ट किया कि 'अनुपस्थिति' का अर्थ इस रूप में लगाया जा सकता है :

> "पिता की बालक के प्रति अस्थायी या अन्यथा या पूर्ण अनाशक्ति अथवा पिता का व्याधि के कारण या अन्यथा असमर्थ होना ।"[34]

2.2.8 अतः, उपर्युक्त विनिर्दिष्ट स्थितियों में माता, पिता के जीवनकाल के दौरान भी, नैसर्गिक संरक्षक हो सकती है ।

---

[32] पारस दीवान, ला आफ अडोप्शन, माइनोरिटी, गार्डियनशिप एंड कस्टडी (2012), यूनिवर्सल ला पब्लिशिंग क० : नई दिल्ली, पृष्ठ xv.

[33] (1999) 2 एससीसी 228.

[34] गीता हरिहरण बनाम भारतीय रिजर्व बैंक (1999) 2 एससीसी 228, ¶ 25

2.2.9 हिन्दू अप्राप्तवय और संरक्षकता अधिनियम की धारा 13 में यह घोषित किया गया है कि किसी हिन्दू अप्राप्तवय की संरक्षकता का विनिश्चय करने में, 'अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात' होगी और किसी भी व्यक्ति को हिन्दू अप्राप्तवय का संरक्षक नियुक्त नहीं किया जा सकेगा यदि न्यायालय की यह राय है कि यह "अप्राप्तवय के कल्याण" में नहीं होगा ।[35]

2.2.10 हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम के अधीन संरक्षकता के संबंध में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला जा सकता है । प्रथम, जब नैसर्गिक संरक्षकता की बात आती है तो पिता की अधिमानी स्थिति बनी रहेगी और माता केवल आपवादिक स्थिति में ही नैसर्गिक संरक्षक बनती है जैसा कि उच्चतम न्यायालय द्वारा **गीता हरिहरण** वाले मामले में स्पष्ट किया गया है, । इस प्रकार, यदि माता जन्य से ही अप्राप्तवय की अभिरक्षा रखती है और उसकी अप्राप्तवय की देखरेख के लिए अनन्य अधिकारिता रही है तो भी पिता, किसी भी समय अपने विशिष्ट संरक्षकता अधिकारों के आधार पर अभिरक्षा का दावा कर सकता है । अतः **गीता हरिहरण** वाले मामले में हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम की धारा 6(क) में की मूल समस्या पर पर्याप्त विचार नहीं किया गया है । दूसरे, सभी कानूनी संरक्षकता प्रबंध अन्ततोगत्वा धारा 13 में अन्तर्विष्ट सिद्धान्त के अध्यधीन हैं अर्थात् यह कि अप्राप्तवय का कल्याण 'सर्वोपरि विचारणीय बात' है । पिता के सुदृढ़ संरक्षकता अधिकारों के उत्तर में केवल यही उपबंध है कि केवल विवाद की दशा में माता अभिरक्षा/संरक्षकता के लिए तर्क-वितर्क कर सकती है ।

2.2.11 संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम और हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम के बीच विभेद का बिन्दु कल्याण के सिद्धान्त पर दिए गए बल में निहित है । संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अधीन, पितृत्व का प्राधिकार कल्याण के सिद्धान्त को अधिक्रांत करता है जब कि हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम के अधीन कल्याण का सिद्धान्त संरक्षकता का अवधारण करने में सर्वोपरि विचारणीय बात है । इस प्रकार, हिन्दू बालकों की संरक्षकता के प्रश्नों का विनिश्चय करने के लिए उनका कल्याण ही सर्वोपरि हितकर है जो कि पितृत्व प्राधिकार को प्रत्यादिष्ट कर देगा । गैर-हिन्दू बालकों के लिए, कल्याण सिद्धान्त को अग्रसरण करने में हस्तक्षेप करने का न्यायालय का प्राधिकार पिता के नैसर्गिक संरक्षक के रूप में के प्राधिकार के अधीनस्थ बनाया गया है ।[36]

---

[35] हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षक अधिनियम, 1956 का 32 § 13

[36] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का 8, § 17(1) ("अप्राप्तवय का संरक्षक नियुक्त या घोषित करने में .... न्यायालय उस विधि से संगत, जिसके अप्राप्तवय अध्यधीन है, उस बात से

(iii) हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955

2.2.12 हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 26 में न्यायालयों को अप्राप्तवय बालकों की अभिरक्षा, भरण-पोषण और शिक्षा के संबंध में उनकी इच्छाओं के अनुरूप अधिनियम के अधीन की किसी कार्यवाही में अन्तरिम आदेश पारित करने के लिए प्राधिकृत किया गया है । इस धारा के अधीन न्यायालयों को, पूर्व में पारित ऐसे अंतरिम आदेशों का प्रतिसंहरण, निलंबन या उनमें परिवर्तन करने के लिए प्राधिकृत किया गया है ।

(iv) इस्लामिक विधि

2.2.13 इस्लामिक विधि में, पिता नैसर्गिक संरक्षक होता है । किन्तु अभिरक्षा पुत्र की दशा में, उसके सात वर्ष के होने तक और पुत्री की दशा में उसके यौवनागम के आने तक माता में निहित होती है । इस्लामिक विधि ऐसी पूर्ववर्ती विधिक पद्धति है जिसमें संरक्षकता और अभिरक्षा के बीच स्पष्ट विभेद का तथा माता के अभिरक्षा संबंधी अधिकार की स्पष्ट मान्यता का उपबंध है ।[37] हिजन्नत की संकल्पना में यह उपबंधित है कि सभी व्यक्तियों में से माता, विवाह के दौरान और विवाह के विघटन के पश्चात्, दोनों दशाओं में अपने बच्चों की, एक निश्चित आयु तक, अभिरक्षा रखने के लिए योग्य होती है । माता को इस अधिकार से तब तक वंचित नहीं किया जा सकता जब तक कि धर्मविमुख्ता या अवचार के कारण वह निरर्हित न हो और उसको अभिरक्षा बालक के कल्याण के विपरीत न पाया जाए ।[38] संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अधीन न्यायिक विनिश्चयों में, मुस्लिम बालकों को शामिल करते हुए न्यायालयों द्वारा कई बार इस्लामिक विधि के अधीन बालकों की अभिरक्षा के प्रति माता के अधिकार को मान्य ठहराया गया है और कई अन्य मामलों में बालक के कल्याण को बात पर ध्यान दिए बिना अभिरक्षा माता को दी गई है । इन मामलों पर नीचे विचार-विमर्श किया गया है ।

मार्गदर्शित होगा, जो उन परिस्थितियों में अप्राप्तवय के कल्याण के लिए प्रतीत हो ।") (बल देने रेखांकित किया गया) ।

[37] पारस दीवान ला आफ अडोप्शन, माइनोरिटी, गार्डियनशिप एंड कस्टडी (2012), यूनिवर्सल ला पब्लिशिंग क० : नई दिल्ली, पृष्ठ xv.

[38] यथोक्त, पृष्ठ xvii.

(v) पारसी और क्रिश्चियन विधि

2.2.14 हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 26 के समान, पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936[39] की धारा 49 और भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1896[40] की धारा 41 के अधीन न्यायालय, इन अधिनियमों के अधीन की किसी कार्यवाही में अप्राप्तवय बालकों की अभिरक्षा, भरण-पोषण और शिक्षा के लिए अंतरिम आदेश जारी करने के लिए प्राधिकृत है । पारसी और क्रिश्चियन बालकों की संरक्षकता संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिकार द्वारा शासित होती है ।

आ. न्यायिक निर्वचन

2.3.1 भारत के उच्चतम न्यायालय[41] तथा लगभग सभी उच्च न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभिरक्षा संबंधी विवादों में, बालक के सर्वोत्तम हित/कल्याण की बात ऊपर रेखांकित विषय पर कानूनी उपबंधों को भी अधिक्रांत देती है । संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अधीन पुराने मामलों में स्पष्ट रूप से यह अभिनिर्धारित किया गया है कि पिता को नैसर्गिक संरक्षक के रूप में की उसकी स्थिति से केवल तभी वंचित किया जा सकता है यदि उसे संरक्षकता के लिए अयोग्य पाया जाता है, ऐसे अनेक मामले भी हैं जहां कि न्यायालयों द्वारा इस धारणा के प्रति अपवादस्वरूप विनिश्चय किए गए हैं ।

2.3.2 कुछ दृष्टांतस्वरूप उदाहरण इस प्रकार हैं : संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अधीन वर्ष 1950 के एक विनिश्चय में, मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा कल्याण के सिद्धान्त के आधार पर, भले ही पिता को संरक्षक होने के अयोग्य नहीं भी पाया गया था, माता को अभिरक्षा प्रदान की गई थी ।[42] न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अभिरक्षा का विनिश्चय करने में बालकों को उनके कौटुम्बिक परिवेश से, केवल पिता के नैसर्गिक संरक्षकता के अधिकार को प्रभावी रूप देने के लिए, दूर नहीं किया जाना चाहिए ।[43] ऐसे एक मामले में, जहां कि बालक का पालन-पोषण माता की मृत्यु के पश्चात् मातामह मातामही द्वारा किया गया था, आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संविधान के अनुच्छेद 21 को ध्यान में रखते हुए, बालकों को जंगम वस्तु नहीं माना जा सकता और पिता के बालकों और उनकी संपत्ति पर अभिरक्षा के अप्रतिबंधित अधिकार को

---

[39] पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936 का 3, § 49.

[40] भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1869 का 4 § 41.

[41] मौसमी गांगुली बनाम जयंत गांगुली (2008) 7 एससीसी 673.

[42] सूरा रेड्डी बनाम चीमा रेड्डी, एआईआर 1950 मद्रास 306.

[43] वेगेसिना वैंकट नरसिहा बनाम चिन्तलपति, एआईआर 1971, आंध्र प्रदेश 134.

प्रवर्तित नहीं किया जा सकता भले ही पिता संरक्षक के रूप में कार्य करने के अयोग्य न हो ।[44] ऐसे एक मामले में जहां बालक के माता-पिता दोनों की मृत्यु हो गई थी और पैतृक नातेदारों उस बालक की, जो मातृत्व नातेदारों के साथ रह रहा था, अभिरक्षा का दावा किया था, कलकता उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात है और पैतृक नातेदारों की अभिरक्षा के मामलों में अधिमानी स्थिति नहीं है ।[45] उच्च न्यायालयों द्वारा भी इस संबंध में ऐसे ही विनिश्चय किए जाने के उदाहरण है ।

2.3.3 मुस्लिम बालकों के संबंध में मामलों का विनिश्चय करने में उच्च न्यायालयों द्वारा केवल माता के पक्ष में, जब अभिरक्षा संबंधी उसके अधिकार का मुस्लिम विधि द्वारा समर्थन होता था, विनिश्चय किया था । **सुहारबी बनाम डी. मोहम्मद**[46] वाले मामले में, जिसमें कि पिता ने डेढ़ वर्षीय पुत्री की माता को अभिरक्षा देने के प्रति इस आधार पर आक्षेप किया कि वह निर्धन है, केरल उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि माता इस्लामिक विधि के अधीन उस आयु की पुत्री की अभिरक्षा रखने के लिए प्राधिकृत है । ऐसे ही एक मामले अर्थात् **मोहम्मद जमील अहमद अंसारी बनाम इशरथ सजीदा**[47] वाले मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा एक ग्यारह वर्षीय पुत्र की अभिरक्षा इस आधार पर पिता के पक्ष में अधिनिर्णीत की कि मुस्लिम विधि के अधीन माता को अनन्य अभिरक्षा बालक की दशा में सात वर्ष तक रखने के लिए अनुज्ञात किया गया है और यह साबित करने के लिए कुछ भी नहीं है कि पिता इस मामले में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने मुस्लिम विधि का निर्वचन माता को अभिरक्षा अनुज्ञात करने के रूप में दिया था ।[48]

2.3.4 ऊपरवर्णित विधिक और न्यायिक ढांचे में दो समस्याएं देखी जा सकती हैं । पहली संरक्षकता के मामले में पिता की अधिमानी स्थिति, जो कि अनिवार्यतः अभिरक्षा के मामले में नहीं है । दूसरे बालक के कल्याण के सिद्धान्त की, इसके व्यापकतः प्रयोग किए जाने के बावजूद, अनिश्चितता का होना ।

(i) पिता की उच्चतर स्थिति :

2.3.5 हमारे द्वारा ऊपर यह उल्लेख किया गया है कि संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम के अधीन संरक्षकता के संदर्भ में माता और पिता के बीच के विभेद को

---

[44] एल. चन्द्रन बनाम वेंकटालक्ष्मी, एआईआर 1981, आंध्र प्रदेश 1.

[45] सत्येन्द्र नाथ बनाम बी. चक्रवर्ती, एआईआर, 1981, कलकत्ता 701.

[46] एआईआर, 1988 केरल 36.

[47] एआईआर 1981, आंध्र प्रदेश 106.

[48] मुमताज बेगम बनाम मुबारक हुसैन, एआईआर 1986 मध्य प्रदेश 221.

धारा 19(ख) में 2010 के संशोधन द्वारा दूर कर दिया गया है । किन्तु हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम के अधीन माता-पिता के बीच यह विभेद बना हुआ है । वर्ष 1989 में, हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम की धारा 6(क) के अधीन पिता को दी गई अधिमानी स्थिति के बारे में विधि अयोग द्वारा यह कथन किया गया था कि–

> "इस प्रकार इस आक्षेपणीय प्रतिपादना को कानूनी मान्यता दी गई है कि माता की अपेक्षा पिता अप्राप्तवय बालक की अभिरक्षा के लिए हकदार है । इस तथ्य के अलावा कि माता और पिता के बीच अधिमानी क्रम में माता को अवर स्थिति प्रदान करने का कोई युक्तिसंगत आधार नहीं है, इस प्रतिपादना को अनेक आधारों पर चुनौती दी जा सकती है । सर्वप्रथम, इससे इसके महिला विरोधी होने का आभास होता है । इससे महिलाओं के प्रति अविश्वास और पुरुषों की श्रेष्ठता तथा महिलाओं की अपकृष्टता दिखाई देती है । पूर्व में, यह मानते हुए कि ऐसा कुछ था, इसके लिए चाहे कोई औचित्य रहा हो, इस पुरातन पक्षग्रहण को, कम से कम भारत के संविधान में इस बात का उपबंध किए जाने के पश्चात् जिसमें कि महिलाओं के लिए समान अधिकार होने की घोषणा की गई है और अनुच्छेद 15 के अधीन प्रतिष्ठापित इस उच्च सिद्धान्त के अधीन लिंग के आधार पर विभेद न किए जाने की गारंटी दी गई है, बनाए रखने की कोई औचित्य नहीं है । वस्तुतः अनुच्छेद 15 के खंड (3) में, अनिवार्य विवक्षा द्वारा, महिलाओं के पक्ष में और बालकों के पक्ष में झुकाव के साथ महिलाओं और बालकों की विशेष जरुरतों के अनुसार बनाए गए फायदाप्रद विधान का पूर्वेक्षण किया गया है । यह निस्संदेह आश्चर्यजनक है कि उक्त सांविधानिक उपबंध के होते हुए भी लगभग चार दशकों से महिलाओं के प्रति विभेद को सहन किया जाता रहा है ।"[49]

2.3.6 आयोग ने "पिता और माता, दोनों, को 'संयुक्त रूप से एऔर पृथक् रूप से' नैसर्गिक संरक्षक के रूप में, जिसे अप्राप्तवय और उसकी संपत्ति के संबंध में समान अधिकार हो, वैधानिक रूप देने के लिए धारा 6(क) का संशोधन करने की सिफारिश की थी ।"[50]

---

[49] भारत का विधि आयोग, 133वीं रिपोर्ट, अगस्त (1989), ¶ 4.1, http://lawcommissionofindia.nic.in/101-169/Report133.pdf पर उपलब्ध है ।

[50] भारतीय विधि आयोग, 133वीं रिपोर्ट, अगस्त (1989), ¶ 4.3, http://lawcommissionofindia.nic.in/101-169/Report133.pdf पर उपलब्ध है ।

2.3.7 इस समस्या पर, कानूनी विधि और पितृत्व की भूमिकाओं पर हाल ही की न्यायिक में पिता की श्रेष्ठ स्थिति के बीच की असंगतता विचारणाओं द्वारा और प्रकाश डाला गया है । **पदम शर्मा** बनाम **रत्तन लाल शर्मा**[51] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि माता भी बालक के भरण-पोषण के लिए समान रूप से धन देने की उत्तरदायी है । यद्यपि, माता और पिता के उत्तरदायित्व में समानता के लक्ष्य को अपनाना प्रशंसनीय है, तथापि, इस विनिश्चय का व्यंगयत्मक परिणाम निकला–माता को नैसर्गिक संरक्षक नहीं समझा गया है और इसलिए बालक पर प्रभाव डालने वाले महत्वपूर्ण विनिश्चयों में उसका कोई कथन नहीं है, किन्तु उसका बालक के प्रति समान वित्तीय उत्तरदायित्व है । इसी प्रकार 2004 के एक निर्णय में, कर्नाटक उच्च न्यायालय के एक निर्णय पर जिसमें कुटुंब न्यायालय के आदेश को उलट दिया गया था और माता को अवयस्क पुत्री की अभिरक्षा रखने की अनुज्ञा दी गई थी, टिप्पणी करते हुए उच्चतम न्यायालय ने यह उल्लेख किया कि–

> "हम यह स्पष्ट कर दें कि हम उच्च न्यायालय द्वारा माता के पक्ष में की गई साधारण मताभिव्यक्तियों और टिप्पणियों का समर्थन नहीं करते हैं क्योंकि बालक की अभिरक्षा रखने के लिए अधिमान सदैव पिता का होना चाहिए । हमारी सुविचारित राय में, माता के पक्ष में ऐसा व्यापीकरण नहीं किया जाना चाहिए ।"[52]

2.3.8 माता-पिता के बीच समता ऐसा लक्ष्य है जिसका अनुशीलन किया जाना चाहिए और निस्संदेह विधि में लिंग संबंधी स्थिर धारणाओं के आधार पर माता-पिता के बीच अधिमान स्थापित नहीं किए जाने चाहिए । तथापि, ऐसी समता न केवल भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों के संदर्भ में हो सकती है बल्कि माता-पिता के अधिकारों और विधिक स्थिति के संदर्भ में भी होनी चाहिए । इस प्रकार, इस क्षेत्र में सुधार की दिशा में पहला उपाय हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम में पिता की अधिमानी स्थिति को समाप्त करने का और माता तथा पिता, दोनों, को नैसर्गिक संरक्षक बनाने का होना चाहिए ।

(ii) कल्याण संबंधी मानक की अनिश्चितता

2.3.9 यद्यपि, कल्याण संबंधी सिद्धान्त का प्रयोग व्यापक रूप से अभिरक्षा संबंधी विवाद्यकों पर कार्रवाई करने वाले अपील न्यायालयों द्वारा किया जाता है, तथापि,

---

[51] एआरआई 2000 एससी 1398.

[52] कुमार वी जागीरदार बनाम चेथना रामतीरथा, एस.एल.पी. (सिविल) 4230-4231/2003, भारत का उच्चतम न्यायालय का तारीख 29 जनवरी, 2004 का निर्णय ।

निचले न्यायालयों द्वारा इसके प्रयोग के विस्तार का कोई साक्ष्य नहीं है । कुटुंब न्यायालय के आदेशों के अध्ययन के आधार पर, विधिक शिक्षाविद् आशा वाजपेयी ने यह उल्लेख किया कि–

> "न्यायालयों द्वारा, हो सकता है, बालक के सर्वोत्तम हित पर विचार किया गया हो, किन्तु आदेशों में इस मानक का कोई उल्लेख नहीं होता । न्यायालय उन कारकों की कोई जानकारी नहीं देते कि जिन पर उन्होंने अभिरक्षा प्रदान करने के संबंध विचार किया था और न ही उसके कोई कारण बताते हैं । आदेशों में केवल इस बात का उल्लेख किया जाता है कि किसी मामले विशेष में अभिरक्षा किसको प्रदान की गई है ।"[53]

2.3.10 कल्याण संबंधी सिद्धान्त के संबंध में समस्या यह है कि व्यापक आह्वान के बावजूद अपीली न्यायिक विनिश्चयों में इस सिद्धान्त की विधिक अन्तर्वस्तु को घोषित नहीं किया गया है । कुटुंब विधि के विद्वतजनों ने यह उल्लेख किया है कि यद्यपि ऐसे दृष्टांत दिखाई देते हैं, तथापि ऐसे किसी सैद्धांतिक आधार का पता नहीं लगाया जा सकता कि किस रीति में न्यायालय बालक के कल्याण के मानक का प्रयोग करते हैं । विधिवेता अर्चना पराशर ने उच्चतम न्यायालय के वर्ष 1959 से वर्ष 2000 तक के उन निर्णयों का विश्लेषण किया जिनमें कि अभिरक्षा संबंधी विवादों में सर्वोत्तम हित के सिद्धान्त का प्रयोग किया गया था सुश्री पराशर ने यह निष्कर्ष निकाला कि इस बारे में विधायी मार्गदर्शक सिद्धान्त न होने की दशा में कि अप्राप्तवय के सर्वोत्तम हित का निर्धारण करने के लिए कौन से कारकों का प्रयोग किया जाना चाहिए, न्यायालय द्वारा इस बारे में कि बालकों के लिए क्या सर्वोत्तम है अपने व्यक्तिगत विचारों और आदर्श पितृत्व की विचारणाओं के आधार पर भिन्न-भिन्न निर्वचन करते हैं ।[54] दृष्टांतस्वरूप, इस बारे में कि क्या अभिरक्षा का विनिश्चय करने में माता या पिता की वित्तीय हैसियत सुसंगत कारक होती है, परस्पर विरोधी निर्णय दिए गए हैं ।[55] निस्संदेह, अनेकों निर्णयों में माता के पक्ष में नजीरें स्थापित की गई

---

[53] आशा बाजपेयी कस्टडी एंड गार्जियनशिप आफ चिल्ड्रन इन इंडिया, 39(2) फैमिली ला क्वाटरली 441,447(2005).

[54] अर्जना पाराशर, वेलफेयर आफ चाइल्ड इन फैमिली लाज-इंडिया एंड आस्ट्रेलिया, 1(1) नालसर ला रिव्यू 49, 49 (2003).

[55] रोजी जैकब बनाम ए. चक्रमाकक (एआईआर 1973, एससी 2090) में उच्चतम न्यायालय ने बालक की अभिरक्षा माता को प्रदान की क्योंकि वह आर्थिक रूप से संपन्न थी और इसलिए बालक की देखभाल करने के लिए सक्षम थी । भाग्य लक्ष्मी बनाम नारायण राव (एआईआर 1983 मद्रास 9) में मद्रास उच्च न्यायालय ने बालक की अभिरक्षा पिता को प्रदान की क्योंकि उसके पास बालक के सर्वोत्तम सुखसुविधा और शिक्षा उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त साधन थे । अशोक सामजीभाई धरोड़ बनाम नीता अशोक धरोड़ [II (2001) डीएमसी 48 बंबाई] में बंबाई उच्च न्यायालय ने यह

हैं। किन्तु जैसा कि सुश्री पराशर द्वारा उचित रूप से यह उल्लेख किया गया है कि ये विनिश्चय भी न्यायाधीशों की बोधक्षमता पर आधारित होते हैं कि कौन 'अच्छी' माता है। परिणामतः ऐसी महिलाएं जो इन मापदंडों को पूरा नहीं कर पाती उन्हें बालकों की अभिरक्षा का दावा करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है ।

2.3.11 कल्याण संबंधी सिद्धान्त के अधीन न्यायाधीशों को व्यापक विवेकाधिकार प्राप्त हैं इसका अर्थ यह हुआ कि ऐसे कतिपय मुद्दे जिन पर कि विचार किया जाना चाहिए, उन्हें अभिरक्षा का अवधारण करते समय गंभीरतापूर्वक नहीं लिया जाता है। पिता, पितामह या अन्य **पुरुष** नातेदारों द्वारा बालिका के यौन शौषण के अभिकथनों पर बिना किसी अन्वेषण के ध्यान नहीं[56] दिया जाता है । यदि वे न्यायाधीश को अनधिसंभाव्य प्रतीत होते हैं। विधिवेत्ता और क्रियावादी फ्लेविया एज्नेस इस बारे में यह उल्लेख किया है कि "न्यायालयों को अपनी शक्ति का प्रयोग दूरदर्शिता और सतर्कतापूर्वक करना चाहिए जिसे कि इससे बालकों के मूलभूत मानव अधिकार, प्राण के अधिकार, जिसके अन्तर्गत भय और संत्रास के बिना जीवन का अधिकार भी है, का अतिक्रमण न हो।"[57] अतः कल्याण के मानक के जो अवधारक तत्व हैं उन्हें स्पष्ट रूप से अधिकथित किया जाना चाहिए जिससे न्यायाधीशों को अभिरक्षा और पहुंच का अवधारण करते समय कतिपय मुद्दों की अनदेखी करने से निवारित किया जा सके ।

2.3.12 इस अध्याय में, भारत में संरक्षकता और अभिरक्षा को शासित करने संबंधी विधिक ढांचे का पुनर्विलोकन किया गया है और उसमें उन दो क्षेत्रों की पहचान की गई हैं जिनमें विधायी सुधार अपेक्षित है । अगले अध्याय में, अन्य अधिकारिताओं के उदाहरणों के आधार पर सम्मिलित अभिरक्षा की संकल्पना पर विचार-विमर्श किया गया है ।

अभिनिर्धारित किया कि पिता और उसके संबंधियों को धनाढय होना बालक की अभिरक्षा उनके पक्ष में देने के लिए एक कारक नहीं हो सकता ।

[56] फ्लेविया एज्नेस, फेमली ला II: मैरेज, डाइवोर्स एंड मट्रीमोनियल लिटिगेशन (2011), आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : नई दिल्ली, पृष्ठ 257-259.

[57] यथोक्त पृष्ठ 259.

अध्याय 3

संयुक्त अभिरक्षा की संकल्पना

अ. संयुक्त अभिरक्षा के प्रति अन्तरराष्ट्रीय दृष्टिकोण

3.1.1 संपूर्ण विश्व में संयुक्त अभिरक्षा की पद्धतियां बहुत ही भिन्न-भिन्न हैं। भिन्न-भिन्न देशों के तुलनात्मक पुनर्विलोकन से दृष्टिकोणों के बहुत ही भिन्न-भिन्न होने का पता चलता है । "संयुक्त अभिरक्षा" पद को भिन्न-भिन्न रूपों में निर्दिष्ट किया जा सकता है : संयुक्त विधिक अभिरक्षा, संयुक्त भौतिक अभिरक्षा या संयुक्त रूप से दोनों रूपों में। विर्जिनिया राज्य में इस परिभाषा में इसे इस रूप में जाना जाता है :

> "संयुक्त अभिरक्षा" से अभिप्रेत है, (i) संयुक्त विधिक अभिरक्षा, जहां माता और पिता दोनों बालक की देखरेख और नियंत्रण का संयुक्त उत्तरदायित्व और बालक से संबंधित विनिश्चय करने का संयुक्त प्राधिकार रखते हैं, भले ही बालक का मुख्य निवास स्थान केवल एक ही (माता या पिता) के साथ ही हो, (ii) संयुक्त भौतिक अभिरक्षा, जहां माता और पिता दोनों बालक की सम्मिलित भौतिक और अभिरक्षात्मक देखरेख करते हैं, या (iii) संयुक्त विधिक और संयुक्त भौतिक अभिरक्षा का संयोजन, जिसे न्यायालय बालक के सर्वोत्तम हित में समझता है ।[58]

3.1.2 इसी प्रकार, जार्जिया राज्य द्वारा संयुक्त अभिरक्षा को "संयुक्त विधिक अभिरक्षा, संयुक्त भौतिक अभिरक्षा अथवा संयुक्त विधिक अभिरक्षा और संयुक्त भौतिक अभिरक्षा" के रूप में परिभाषित किया गया है ।[59]

3.1.3 एकल विधिक अभिरक्षा और एकल भौतिक अभिरक्षा के बीच विभेद है, यद्यपि, कुछ राज्यों द्वारा (जिसमें विर्जिनिया भी है) उन्हें एक साथ जोड़ा गया है।[60] कैलिफोर्निया राज्य द्वारा निम्नलिखित परिभाषाएं दी गई हैं :

---

[58] विर्जिनिया कोड एन. § 20-124.1.

[59] जार्जिया कोड एन. § 19-9-6(4).

[60] विर्जिनिया कोड एन. § 20-124.1 ("'एकल अभिरक्षा' से यह अभिप्रेत होता है कि एक व्यक्ति बालक की देखरेख और नियंत्रण का अधिकार रखता है और उसे बालक से संबंधित विनिश्चिय करने का मुख्य प्राधिकार होता है ।")

"एकल विधिक अभिरक्षा" से यह अभिप्रेत है कि एक जनक (माता अथवा पिता) को बालक के स्वास्थ्य, शिक्षा और कल्याण के संबंध में विनिश्चय करने का अधिकार और उत्तरदायित्व होगा ।[61]

"एकल भौतिक अभिरक्षा" से यह अभिप्रेत है कि बालक न्यायालय की अभ्यागम का आदेश के अधीन रहते हुए एक जनक (माता अथवा पिता) के साथ निवास करेगा और उसके ही पर्यवेक्षण के अधीन होगा ।[62]

3.1.4 सभी भिन्न-भिन्न सम्मिलित भरण-पोषण की प्रणालियों में जो एक एकरूप विषयवस्तु है वह यह है कि सबमें बालक के सर्वोत्तम हित को महत्व दिया गया है।[63] तथापि, अधिकारितायों में भिन्नता है कि वे किस प्रकार इस मानक को लागू करते हैं । कुछ की उपधारणा यह कि माता-पिता द्वारा संयुक्त पालन-पोषण बालक के सर्वोत्तम हित में है–आस्ट्रेलिया के कुटुंब विधि अधिनियम (फैमिली ला ऐक्ट) में यह कथित है कि "जब बालक के संबंध में माता-पिता द्वारा पालन-पोषण का आदेश किया जाए तब न्यायालय को इस उपधारणा को लागू करना चाहिए कि वह बालक के सर्वोत्तम हित में है कि बालक माता-पिता का बालक का पालन-पोषण करने में समान सम्मिलित उत्तरदायित्व होता है ।"[64] अन्य अधिक्षेत्र सम्मिलित पालन-पोषण को अनुज्ञात तो करते हैं किन्तु इस उपधारणा को सम्मिलित नहीं करते हैं ।मिनेसोटा की विधि में यह स्पष्ट रूप से कथित है कि "संयुक्त भौतिक अभिरक्षा के संबंध में उसके पक्ष में, कुछ अपवादों के साथ या उसके विरुद्ध कोई उपधारणा नहीं होती है।"[65]

---

[61] वेस्टस एन. कैल. फैमिली कोड § 3006.

[62] वेस्टस एन. कैल. फैमिली कोड § 3007.

[63] उदाहरणार्थ, देखिए कनाडा डाइवोर्स ऐक्ट, 1985, § 16(8) ("इस धारा के अधीन आदेश करने में न्यायालय केवल बालक के सर्वोत्तम हितों पर ही विचार करेगा ....."); आस्ट्रेलिया फैमिली ला ऐक्ट, 1975, § 65एए (2006 तक यथा संशोधित) ("इस बात का विनिश्चय करने में बालक के संबंध में पालन-पोषण संबंधी विशिष्ट आदेश करने के लिए न्यायालय को बालक के सर्वोत्तम हितों को सर्वोपरि विचारणीय बात के रूप में ध्यान देना चाहिए"); साउथ अफ्रीका चिल्ड्रन्स ऐक्ट, 2005 का ऐक्ट सं0 38; § 9; यू.के. चिल्ड्रन्स ऐक्ट, 1989, § 1(1).

[64] आस्ट्रेलिया फैमिली ला ऐक्ट, 1975, § 61डीए (यथा संशोधित) ; इदाहो कोड एन. § 32-771बी(4) भी देखिए ("इस बात की उपधारणा की जाएगी कि संयुक्त अभिरक्षा किसी अप्राप्तवय बालक या बालकों के सर्वोत्तम हित में है ।")

[65] एम.एस.ए. 518.17(2)(क).

कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, यूनाटेड किंगडम और केन्या में भी संयुक्त अभिरक्षा के पक्ष में या उसके विरुद्ध कोई उपधारणा नहीं है।[66]

3.1.5 अनेक देश, जो सम्मिलित पालन-पोषण को अनुज्ञात करते हैं (अथवा इसके लिए कानूनों अधिमान का उपबंध है), कुछ मामलों में इसे अनुज्ञात नहीं भी करते हैं। जहां कोई घरेलू हिंसा का अथवा किसी प्रकार के दुर्व्यवहार का मामला है, अनेक अधिक्षेत्र सम्मिलित पालन-पोषण के विरुद्ध उपधारणा रखते हैं।[67] उस दशा में भी सम्मिलित पालन-पोषण का पक्ष नहीं लिया जाता है जहां कि माता-पिता के बीच विशिष्टतया कलहपूर्ण संबंध हैं। यूएस कोर्ट आफ अपील ने ब्राइमेन बनाम ब्राइमेन वाले मामले में यह उल्लेख किया था कि :

> संयुक्त अभिरक्षा को, मुख्यतया सापेक्ष रूप से स्थिरचित, सौहार्द्रपूर्ण माता-पिता के लिए, जो परिपक्व सभ्य रूप में व्यवहार करते हैं, प्रोत्साहित किया जाता है। चूंकि न्यायालय के आदेश द्वारा व्यवस्था पहले से कटु और कलुषित संबंधों में रह रहे माता-पिता पर अधिरोपित की जाती है, अतः एक-दूसरे को घोर दुर्गणों और अवगुणों के आधार पर आरोपित करने से कुटुंब में केवल तनाव बढ़ता ही है।[68]

3.1.6 व्यवहार्य विचारणीय बाते भी सुसंगत होती हैं। कुछ अधिक्षेत्र सम्मिलित पालन-पोषण का अधिनिर्णय करते समय भूगोलीय सान्निध्यता पर विचार करते हैं।[69] उदाहरणार्थ, दक्षिण अफ्रीका कुटुंब न्यायालय बालकों की संयुक्त भौतिक अभिरक्षा सतत् रूप से अधिनिर्णीत नहीं करते कि ऐसी व्यवस्था बालक के लिए

---

[66] कनाडा डाइवोर्स ऐक्ट, आर.एस.सी., 1985, अध्याय 3 (दूसरा अनुपूरक), §16(4),(8); साउथ अफ्रीका चिल्ड्रन्स ऐक्ट, 2005 का 38 ; §§ 22,23,30; यू.के. चिल्ड्रन्स ऐक्ट, 1989 §§ 8, 11(4); केन्या चिल्ड्रन्स एक्ट §§ 82(1); 83(1).

[67] यथोक्त एसटी. 32-717बी(5) ("यह उपधाराणा की जाएगी कि संयुक्त अभिरक्षा किसी अप्राप्तवय बालक के सर्वोत्तम हितों में उस दशा में नहीं होगी यदि माता-पिता में से एक को न्यायालय द्वारा घरेलू हिंसा का लगातार दोषी पाया जाता है .....") (इदाहो); आस्ट्रेलिया फैमिली ला ऐक्ट, 1975 (यथा संशोधित), § 61डीए(2) (इस बात की उपधारणा कि समान पालन-पोषण का उत्तरदायित्व बालक के सर्वोत्तम हित में होता है, उस दशा में लागू नहीं होती है यदि इस बात के विश्वास करने का युक्तियुक्त आधार है कि माता अथवा पिता दुर्व्यवहार या घरेलू हिंसा में लगा हुआ है ।

[68] ब्राइमेन बनाम ब्राइमेन, 44 एन.वाई. 2डी 584 (1978) (उद्धरण का लोप किया गया); पेडजेन एंड पेडजेन (1991) एफ.एल.सी.-92-231 (आस्ट्रेलिया) भी देखिए (जिसमें सम्मिलित अभिरक्षा, जिसके अन्तर्गत उपयुक्त पालन-पोषण, परस्पर विश्वास, सहयोग और अच्छे संबंध (संवाद) के लिए पूर्व शर्त लगाई गई है) ।

[69] पेडजेन एंड पेडजेन (1991) एफ.एल.सी.-92-231 (आस्ट्रेलिया) ।

विध्वंसक होगी, विशिष्टतया उन मामलों में जहां माता-पिता में बहुत ही अधिक फासला है।[70] इसके साथ ही बालक की वस्तुतः रहन-सहन की स्थिति भी सुसंगत हो सकती है–यूनाइटेड किंगडम में, सम्मिलित रूप से रहने के आदेशों को "वहां उचित समझा जा सकता है जहां बालक के जीवन की वास्तविक प्रकृत-स्वरूप की विधिक रूप से पुष्टि होती है।"[71]

3.1.7 अनेक अधिक्षेत्रों में विधिक अभिरक्षा (बालक के लिए मुख्य विनिश्चय, जैसे कि शिक्षा, चिकित्सा, दंत-देखरेख, धर्म और भाषा व्यवस्था संबंधी विनिश्चय करने का अधिकार)[72] और भौतिक अभिरक्षा (बालक की नियमित दैनिक देखरेख और नियंत्रण का उपबंध करने का अधिकार) के बीच के विभेद को स्वीकारा गया है।[73] यह विभेद भारत में संरक्षकता और अभिरक्षा के बीच के विभेद के समानांतर है । कुछ अधिक्षेत्रों में इस विभेद के लिए अन्य पदों का प्रयोग किया गया है। उदाहराणार्थ आस्ट्रेलिया में, "माता-पिता के उत्तरदायित्व", जिसे ऐसे कर्तव्यों, शक्तियों, उत्तरदायित्वों और प्राधिकार के रूप में परिभाषित किया गया है जो कि विधि द्वारा माता-पिता को बालक के संबंध में प्राप्त होता है - उस समय सीमा से भिन्न है जो

---

[70] ए बेरट एंड एस बर्मन, "डिसाइडिंग दि बेस्ट इन्टेरेस्ट्स आफ दि चाइल्ड" 118 साउथ अफ्रीका ला जर्नल (2001).

[71] ए वाले मामले में [2008] इडब्ल्यूसीए सिविल 867, ¶ 66

[72] देखिए वी.ए.एम.एस., 452.375(1)(2) ("संयुक्त अभिरक्षा" से यह अभिप्रेत है कि माता-पिता बालक के स्वास्थ्य, शिक्षा और कल्याण के संबंध में सम्मिलित विनिश्चय करने के अधिकार और उत्तरदायित्व रखते हैं और जब तक आबंटित, विनियोजित अथवा डिक्रीत न किया जाए, माता-पिता विनिश्चय करने के अधिकारों, उत्तरदायित्वों और प्राधिकार का प्रयोग करने में एक-दूसरे के साथ परामर्श करेंगे...।"); 15 वी.एस.ए. § 664(1)(ए) ("'विधिक उत्तरदायित्व' से बालक की नित्य की दैनिक देखरेख और नियंत्रण से भिन्न बालक के अधिकारों और उत्तरदायित्वों पर प्रभाव डालने वाले विभिन्न मामलों का अवधारण और नियंत्रण करने के अधिकार और उत्तरदायित्व अभिप्रेत होते हैं । इन मामलों के अन्तर्गत शिक्षा, चिकित्सा और दंत-देखरेख; धर्म और यात्रा संबंधी व्यवस्थाएं हैं किन्तु ये इस तक सीमित नहीं हैं । विधिक उत्तरदायित्व को एकल रूप से रखा जा सकता है या उसे बांटा जा सकता है या एक दूसरे से साझा किया जा सकता है ।")

[73] देखिए वी.ए. कोड एन. § 20-124.1 ("'संयुक्त अभिरक्षा' से अभिप्रेत है .....; (ii) संयुक्त भौतिक अभिरक्षा, जहां माता और पिता, दोनों, ही बालक की भौतिक और अभिरक्षात्मक देखरेख के सहभागी होते हैं....."); 15 वी.एस.ए. § 664(1)(बी) ("'भौतिक उत्तरदायित्व' से दूसरे जनक अर्थात् माता की दशा में पिता और पिता की दशा में माता के बालक से संपर्क करने के अधिकार के अधीन रहते हुए बालक की नित्य की दैनिक देखरेख और नियंत्रण का उपबंध करने के अधिकार और उत्तरदायित्व अभिप्रेत है । भौतिक उत्तरदायित्व एकल रूप से रखा जा सकता है या उसे बांटा जा सकता है या एक-दूसरे के साथ साझा किया जा सकता है ।" जार्जिया कोड एन., § 19-9-6(3) ("'संयुक्त भौतिक अभिरक्षा' से यह अभिप्रेत होता है कि भौतिक अभिरक्षा को माता-पिता द्वारा इस रूप में साझा किया जाता है जिससे कि माता-पिता दोनों द्वारा बालक के साथ समान रूप से समय और संपर्क सुनिश्चित हो सके)" ।

बालक माता-पिता, में से प्रत्येक के साथ बिताता है।[74] इसी प्रकार, फ्रांस में "माता-पिता का प्राधिकार" जिसमें उन अधिकारों और कर्तव्यों को, जिनसे कि अन्ततः बालक का कल्याण होता है, प्रति निर्देश करता है,[75] माता-पिता के उससे मिलने और साथ रहने के अधिकार से भिन्न है।[76] केन्या में "विधिक अभिरक्षा" और "भौतिक अभिरक्षा" के बीच विभेद किया गया है।[77]

आ. भारत में संयुक्त अभिरक्षा

3.2.1 यद्यपि, संयुक्त अभिरक्षा का विनिर्दिष्ट रूप से भारीतय विधि के लिए उपबंध नहीं किया गया है तो भी वकीलजनों द्वारा यह प्रतिवेदन किया गया है कि अभिरक्षा संबंधी विवादों में विनिश्चय करते समय पर कुटुम्ब न्यायालय के न्यायाधीश इस संकल्पना का उपयोग करते हैं। आधुनिक समय में भारत में माता-पिता द्वारा संयुक्त पालन-पोषण को संस्थात्मक बनाने संबंधी प्रयासों से संबंधित दो उदाहरणों की नीचे अवेक्षा की गई है। बालक अधिकार प्रतिष्ठान द्वारा "बाल समीपता और बालक अभिरक्षा" संबंधी मार्गदर्शक सिद्धान्तों का एक संवर्ग तैयार किया गया है, मुम्बई आधारित एक गैर-सरकारी संगठन द्वारा संयुक्त अभिरक्षा का निम्नलिखित रीति से अर्थ लगाया गया है :

> बालक बारी-बारी से, एक सप्ताह अभिरक्षक माता-पिता के साथ और एक सप्ताह गैर अभिरक्षक माता-पिता के साथ रह सकता है और इस प्रकार अभिरक्षक माता-पिता और गैर अभिरक्षक माता-पिता बालक की दीर्घकालिक

---

[74] आस्ट्रेलिया फैमिली ला ऐक्ट 1975, § 61बी की ("इस भाग में किसी बालक के संबंध में माता-पिता उत्तरदायित्व से वे सभी कर्वत्य, शक्तियां, उत्तरदायित्व और प्राधिकार अभिप्रेत हैं, जो कि माता-पिता बालकों के संबंध में रखते हैं ।") आस्ट्रेलिया फैमिली ला ऐक्ट 1975, § 61डीए के साथ तुलना कीजिए ("इस उपधारणा में कि माता-पिता का समान उत्तरदायित्व होता है, माता-पिता में से प्रत्येक के साथ बालक द्वारा बिताए गए समय की सीमा के बारे में उपधारणा कोई उपबंध नहीं है")।

[75] फ्रांस सिविल कोड, अनुच्छेद 372-1.

[76] फ्रांस सिविल कोड अनुच्छेद 373-2-1 ("जहां बालक का कल्याण इस प्रकार अपेक्षित है वहां न्यायाधीश किसी एक माता या पिता के लिए जनकीय प्राधिकार का उपयोग कर सकेगा । केवल गंभीर कारणों से दूसरे अन्य माता या पिता को बालक तक पहुंच और उसके आवास के लिए इंकार कर सकेगा ।")

[77] केन्या चिल्ड्रन्स ऐक्ट, § 81(सी)-(डी).

देखभाल कल्याण और विकास में अन्तर्वलित विनिश्चयों की संयुक्त जिम्मेदारी को बांट सकते हैं ।[78]

3.2.2 तथापि, मार्गदर्शक सिद्धान्तों में यह कथन किया गया है कि संयुक्त अभिरक्षा संबंधी यह समझौता सीआरसी के अनुरूप होगा, यह अवेक्षा की जानी चाहिए कि इसके लिए ऐसा कोई कठोर नियम नहीं है जो अभिरक्षा संबंधी सभी मामलों में सार्वभौमिक रूप से लागू किया जा सकता हो ।

3.2.3 संयुक्त अभिरक्षा का दूसरा उदाहरण, 2011 के कर्नाटक उच्च न्यायालय के निर्णय में प्रतिपादित किया गया था जिसमें बारह वर्षीय बालक (लड़के) के विषय में अन्तर्वलित अभिरक्षा संबंधी विवाद का समाधान करने के इस संकल्पना का उपयोग किया गया था । के.एम. विनय बनाम बी. श्रीनिवास[79] वाले मामले में दो न्यायाधीशों वाली न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि माता-पिता दोनों "अवयस्क बालक के संधार्य विकास के लिए अभिरक्षा प्राप्त करने के हकदार हैं । संयुक्त अभिरक्षा को निम्नलिखित रीति से प्रभावी किया गया था :

- अवयस्क बालक को प्रत्येक वर्ष जनवरी से 30 जून तक पिता के साथ और 1 जुलाई से 31 दिसम्बर तक माता के साथ रहने का निदेश दिया गया था ।

- माता-पिता को बालक की शिक्षा और अन्य व्ययों को बराबर बांटने का निदेश दिया गया था ।

- प्रत्येक माता-पिता को, जब बालक अन्य माता या पिता के साथ रह रहा होगा, शनिवार और रविवार को मिलने का अधिकार दिया गया था ।

- बालक को, जब वह अन्य माता या पिता के साथ रह रहा होगा । प्रत्येक माता या पिता से टेलीफोन या वीडियो कान्फ्रेसिंग द्वारा बात करने के लिए अनुज्ञात किया गया था ।

3.2.4 उपरोक्त उदाहरणों के अतिरिक्त, "पिता के अधिकारों" का पक्ष लेने वाले समूहों की ओर से भारत में सम्मिलित अभिरक्षा को संस्थित करने की मांग बढ़ती जा रही है जिन्होंने यह दलील दी है कि भारतीय कुटुम्ब विधि, जिसमें अभिरक्षा विधि भी है, माता के पक्ष में है। परिणामस्वरूप इन समूहों की यह मांग है कि

---

[78] बालक अधिकार प्रतिष्ठान, बाल समीपता और बालक अभिरक्षा संबंधी मार्गदर्शक सिद्धान्त (2011) http://www.mphc.in/pdf/ChildAccess-040312.pdf, पृष्ठ 24 पर उपलब्ध है ।

[79] एमएफए सं0 1729/2011, कर्नाटक उच्च न्यायालय, तारीख 13 सितम्बर, 2013 का निर्णय ।

बालकों के अधिकारों के संबंध में पिता के "समान अधिकार" होने चाहिए। विधि के बारे में ऐसा प्रख्यापन, जो माताओं के पक्ष में है, न केवल तथ्यात्मक रूप से गलत है अपितु उक्त मांग हमारे संवैधानिक और विधिक ढ़ाचे में समानता की त्रुटिपूर्ण कल्पना शक्ति पर भी आधारित है। इसलिए हम यहां यह चर्चा करेंगे कि पिता को ही अभी भी दोनों, धार्मिक और पंथनिरपेक्ष कुटुम्ब विधियों के अधीन नैसर्गिक संरक्षक समझा जाता है, न कि माता को इसके अतिरिक्त हमारे समाज में अभी भी दांपत्य और पारिवारिक जीवन में समानता एक दूरस्थ स्वपन के समान है। अभी भी बड़ी संख्या में महिलाएं अनुचित रूप से गृहस्थी और बच्चों की देखभाल के कार्यों के बोझ से दबी हुई हैं जब कि वे घर के बाहर वैतनिक नियोजन में लग हुई हैं। अतः जब विवाह की अवस्थिति के दौरान जनक संबंधी और देखभाल करने संबंधी उत्तरदायित्वों की कोई समानता नहीं है तो कोई किस आधार पर विवाह के विघटन के पश्चात् बालकों के पालन पोषण संबंधी अधिकारों में समानता का दावा कर सकता है? हमारा संविधान और विधिक ढ़ांचा राज्य को मौलिक समानता का पालन करने का निदेश देता है। मौलिक समानता में घर के भीतर और उसके बाहर पुरुष-स्त्री की सामाजिक आर्थिक स्थिति में भिन्नता को स्वीकारा गया है और परिणामों की समानता प्राप्त करने की अभिलाषा की गई है । अतः हम बालकों पर अत्युक्तिपूर्ण समान अधिकारों पर आधारित माता-पिता द्वारा सम्मिलित पालन पोषण संबंधी पिता के अधिकारों की मांग करने वाले समूहों की स्थिति को खारिज करते हैं ।

3.2.5 तथापि, उक्त स्थिति के होते हुए भी हम यह महसूस करते हैं कि यह नीचे चर्चा किए जाने वाले अनेक अन्य कारणों से भारत में माता-पिता द्वारा सम्मिलित पालन-पोषण की माडल की संभाव्यता पर विचार किया जाना महत्वपूर्ण है।

इ. भारत में संयुक्त अभिरक्षा को अंगीकार किए जाने के कारण

3.3.1 प्रथमतः त्वरित सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के साथ दाम्पत्य और पारिवारिक संबंध अधिक जटिल हो गए हैं और यही परिस्थितियां उनके विघटन का एक कारण हैं। चूंकि ऐसे सामाजिक परिवर्तन जिनका पारिवारिक जीवनशैली पर तेजी से प्रभाव पड़ता है, इसलिए हमें विवाह के दौरान और उसके पश्चात् कौटुम्बिक संबंधों को शासित करने वाली विधियों को अद्यतन करने की आवश्यकता है। वर्तमान समय में अभिरक्षा के लिए हमारा विधिक ढांचा इस उपधारणा पर आधारित है कि अभिरक्षा, विरोधी पक्षकारों में से किसी एक में निहित की जा सकती है और उपयुक्तता का तुलनात्मक रीति में अवधारण किया जाना चाहिए।[80] किन्तु काफी समय बीत जाने के

[80] स्वाति देशपांडे, डाइवोर्स्ड डैड्स यूनाईट फार कस्टडी राइट्स, टाइम्स आफ इंडिया (9 सितम्बर, 2009), http://timesofindia.indiatimes.com/india/Divorced-dads-unite-for-custody-

पश्चात् दोष के आधार पर विवाह विच्छेद द्वारा विवाह भंग का मूलाधार पारस्परिक सहमति से विवाह विच्छेद में परिवर्तित हो जाता है इसलिए हमें अभिरक्षा के बारे में भिन्न रूप विचार करने की आवश्यकता है और उसके लिए ऐसे व्यापक उपबंध करने की आवश्यकता है। जिसके भीतर रहते हुए विवाह विच्छेद करने वाले माता-पिता और बालक यह विनिश्चय कर सकते हैं कि उनके लिए अभिरक्षा की कौन सी व्यवस्था सर्वोत्तम होगी।

3.3.2 दूसरे, अभिरक्षा संबंधी मामलों के प्रति न्यायिक मनोवृत्ति पर्याप्त रूप से विकसित होनी चाहिए। विधिवेता और क्रियावादी फ्लेविया एज्नेस ने यह अवेक्षा की है;

> आधुनिक समय में अभिरक्षा संबंधी लड़ाई में अप्राप्तवय बालक की देखभाल करने के लिए पारम्परिक नैसर्गिक संरक्षक के रूप में न तो पिता और न ही जैविक रूप से सज्जित माता को नैतिक रूप से अभिरक्षा दी जाती है। सिद्धान्त यह है कि बालक के सर्वोतम हित को ध्यान में रखते हुए बालक के मौजूदा रहन सहन की व्यवस्था और घर का वातावरण होना चाहिए.....। प्रत्येक मामले का विनिश्चय बालक की संपूर्ण सामाजिक, शैक्षिण और भावात्मक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए।[81]

3.3.3 किन्तु न्यायिक रूख में इस विकास के बावजूद भी हमने इस विचार की अनदेखी की है कि कतिपय अनुकूल परिस्थितियों के अधीन बालक का सर्वोत्तम हित का परिणाम माता पिता दोनों के एक साथ रखे जाने से भी निकाला जा सकता है। चूंकि बालक के सर्वोत्तम हित का अनुशीलन करने और सम्मिलित अभिरक्षा की संकल्पना के मध्य कोई अन्तर्निहित अन्तर्विरोध नहीं है इसलिए विधि में इस विकल्प का उपबंध करने की आवश्यकता है परन्तु कतिपय आधारभूत शर्तें पूरी होनी चाहिए।

3.3.4 तीसरा जैसा पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि अनेक संस्थाएं, जिनके अन्तर्गत न्यायपालिका भी है, सम्मिलित अभिरक्षा के विचार की ओर आकर्षित होने लगी हैं । हमने ऊपर इनमें से कुछ नवीन विकासों को निर्दिष्ट किया है। किन्तु

---

rights/articleshow/ 4988614.com ("उनका अनुभव यह है कि अक्सर कुटुम्ब न्यायालयों का झुकाव पूर्णतः एक ही ओर होता है या इसके अतिरिक्त आम तौर से बालक अभिरक्षा की लड़ाई का उक्त अवयस्क के ऊपर पूर्ण एक माता या पिता का पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लेने के साथ होता है । अन्य माता या पिता को केवल सप्ताहंत या विद्यालय की छुट्टियों के दौरान पहुंच अनुज्ञात होती है)" ।

[81] फ्लाविया एजेन्स, फेमली ला II: मैरेज, डाइवोर्स एंड मेट्रीमोनियल लिटिगेशन (2011), आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : नई दिल्ली, पृष्ठ 255.

आजकल इस धारणा को अव्यवस्थित रीति में व्यवहार में लाया जा रहा है। सम्मिलित अभिरक्षा की धारणा के लिए बालक के जीवन स्तर के सर्वोत्तम हित के स्पष्ट निर्धारक, न्यायाधीशों और मध्यस्थों की भूमिका, माता-पिता द्वारा पालन पोषण संबंधी योजनाएं और वैसी ही अन्य योजनाओं जैसे अनेक संघटक हैं । इन्हें विधि में अधिकथित किया जाना चाहिए । सम्मिलित अभिरक्षा के लिए आदेश को जीवनक्षम विकल्प बनाने के लिए उसे विधि में अधिकथित किया जाना चाहिए जिससे तालाक देने वाले माता पिता, बालक के कल्याण के समझौता किए बगैर अधिमानी अभिरक्षक व्यवस्था पर पारस्परिक सहमति बना सके ।

3.3.5 अनेक पश्चिमी देशों की विधिक प्रणाली में, जिसका हमने इस अध्याय में पुनर्विलोकन किया है, उपधारणा संयुक्त अभिरक्षा के पक्ष में है और एकल अभिरक्षा का अधिनिर्णय केवल अपवादिक परिस्थितियों में ही किया जाता है । हम पहले ही जनक संबंधी भूमिकाओं, जिम्मेदारियों और प्रत्याशाओं में, असमानताओं का, जो हमारे देश में विद्यमान है, उल्लेख कर चुके हैं । अतः हम संयुक्त अभिरक्षा के पक्ष में उपधारणा रखने वाली विधि के पक्ष में नहीं है । संरक्षकता के मामले के विरुद्ध, जिसमें हमने माता और पिता दोनों के लिए सम्मिलित और समान संरक्षता की सिफारिश की है, इस मामले में हमारा यह विचार है कि संयुक्त अभिरक्षा का एक विकल्प के रूप में उपबंध किया जाना चाहिए जिसका विनिश्चय करने वाला व्यक्ति अधिनिर्णय कर सकता है यदि विश्वास हो जाता है कि इसमें बालक का और अधिक हित होगा ।

अध्याय 4

बालक अभिरक्षा के मामलों में मध्यस्थता

4.1 मध्यस्थता, किसी ऐसे निष्पक्ष पर-व्यक्ति की सहायता से, जो विवादी पक्षकारों की बातचीत द्वारा समझौते पर पहुंचने में सहायता करने का प्रयास करता है, अनाबद्धकारी विवाद निपटान की पद्धति के प्रति निर्देश करती है ।[82]बालक अभिरक्षा के संदर्भ में, मध्यस्थता का केन्द्र-बिन्दू यह अवधारित करना नहीं होता है कि कौन सही या गलत है बल्कि एक ऐसा समाधान स्थापित करना होता है जो किसी कुटुम्ब की आवश्यकताओं को पूरा करता है और जो बालक के सर्वोत्तम हित में है ।[83]बालक अभिरक्षा संबंधी किसी विवाद में मध्यस्थता के फायदे ये हैं कि माता-पिता दोनों के पास अपने बच्चों की अभिरक्षा और पहुंच संबंधी व्यवस्थाओं को अवधारित करने की जानकारी हो; बच्चे यह जानकर अधिक सुरक्षित महसूस करते हैं कि उनके माता-पिता कौटुम्बिक समस्याओं का समाधान करने के लिए एक-साथ काम करते रहने के इच्छुक हैं; माता-पिता यह विनिश्चय करने की बेहतर स्थिति में होते हैं कि उनके बच्चों की आवश्यकता क्या है; इससे माता-पिता को एक-दूसरे में कुछ विश्वास पैदा करने में सहायता मिलती है, जो उन मुद्दों पर, जो उद्भूत होते हैं, भावी बातचीत के लिए अनुज्ञात करता है; ऐसी किसी योजना के अनुसार कार्य करना आसान होता है जो माता-पिता ने स्वयं तैयार की हो बजाय ऐसी योजना के जो न्यायालय द्वारा अधिरोपित की जाती है; और यह न्यायालय की लंबी और खर्चीली लड़ाई से बचने में सहायक हो सकती है ।[84]ऐसी धारणा है कि मध्यस्थता से विवाह-विच्छेद के पश्चात् बच्चों के लिए बेहतर परिणाम निकलते हैं ।[85]

क. भारत में मध्यस्थता के लिए वर्तमान विधिक ढांचा

4.2.1 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 89 में यह उपबंधित है कि न्यायालय किसी समझौते के निबंधन विरचित कर सकता है और उन्हें पक्षकारों को उनकी मताभिव्यक्ति के लिए दे सकता है और पक्षकारों की मताभिव्यक्ति प्राप्त करने के पश्चात् उन निबंधनों को पुनः विरचित कर सकता है और उन्हें माध्यस्थम्, सुलह, न्यायिक समझौता (जिसके अंतर्गत लोक अदालत के माध्यम से समझौता भी है) या

---

[82]एफ्कान्स इंफ्रा. लि. व. चेरियन वर्की कंस्ट्रक्शन, (2010) 8 एस. सी. सी. 24,¶ 8.

[83]टेरी गार्नर,बालक अभिरक्षा मध्यस्थता: मुकदमेबाजी का प्रस्तावित अनुकल्प, 1989 जे. डिस्प. रेस. 139,139-40.

[84]कौटुम्बिक सुलह सेवाएं – बारंबार पूछे जाने वाले प्रश्न, मनिटोबा फैमिली सर्विसिज़, http://www.gov.mb.ca/fs/childfam/family_conciliation_faq.html (अंतिम बार 23 मार्च, 2015 को देखा गया) ।

[85]डेनियले गौवरियु मेडिएशन बनाम लिटीगेशन: विवाद-विच्छेद से बच्चों के बीच पड़ने वाले परिणामों में अंतरों की परीक्षा करना, रिवरडेल मेडिएशन, http://www.riverdalemediation.com/wp-content/uploads/2009/07-Gaureau-Mediation-vs-litigation.pdf. (अंतिम बार 23 मार्च, 2015 को देखा गया ।.

मध्यस्थता के लिए निर्देशित कर सकता है । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 32क के नियम 3 में यह कहा गया है कि कुटुम्ब से संबंधित मामलों के संबंध में ऐसे वादों या कार्यवाहियों में जहां मामले की प्रकृति और परिस्थितियों से संगत ऐसा करना संभव है वहां न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह पक्षकारों की किसी समझौते पर पहुंचने में सहायता करे । इसके अलावा, यदि किसी प्रक्रम पर न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच कोई समझौता होने की युक्तिसंगत संभावना है तो न्यायालय ऐसा समझौता कराने के प्रयास करने में समर्थ बनाने हेतु कार्यवाही को ऐसी अवधि के लिए, जो वह ठीक समझे, कार्यवाही को स्थगित कर सकेगा ।

4.2.2 इसके अलावा, कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 9 कुटुम्ब न्यायालयों का यह कर्तव्य अधिकथित करती है कि वे सर्वप्रथम विषयवस्तु की बाबत किसी समझौते पर पहुंचने में पक्षकारों की सहायता करें और उन्हें मनाए । कुटुम्ब न्यायालयों को भी समझौता कराने के प्रयास करने में समर्थ बनाने हेतु, यदि इसकी कोई युक्तियुक्त संभावना हो, कार्यवाहियों को किसी युक्तियुक्त अवधि के लिए स्थगित करने की शक्ति प्रदत्त की गई है ।

4.2.3 भारत में विवाह-विषयक विवादों के लिए मध्यस्थता की आवश्यकता बढ़ रही है । **के. श्रीनिवास राव** बनाम **डी. ए. दीपा**[86]वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा था कि,

प्राय: विवाह-विषयक विवाद में गलतफहमी का कारण तुच्छ होता है और उससे सुलझाया जा सकता है । अब मध्यस्थता को विवाद का समाधान करने की अनुकल्पी पद्धति के रूप में विधिक मान्यता प्राप्त हो गई है । हमने अनेक विवाह-विषयक विवादों को मध्यस्थता केन्द्रों को निर्देशित किया है । हमारे अनुभव से यह दर्शित होता है कि इस न्यायालय में लगभग 10 से 15 प्रतिशत विवाह-विषयक विवाद विभिन्न मध्यस्थता केन्द्रों के माध्यम से सुलझाए जा चुके हैं । अतः, हम यह महसूस करते हैं कि सर्वप्रथम प्रक्रम पर, अर्थात्, जब कुटुम्ब न्यायालय द्वारा या प्रथम न्यायालय द्वारा मामले पर सुनवाई आरंभ की जाती है तब उसे मध्यस्थता केन्द्रों को अवश्य ही निर्देशित किया जाना चाहिए । विवाह-विषयक विवाद, विशेष रूप से बालक की अभिरक्षा, भरणपोषण आदि से संबंधित विवाद मध्यस्थता के लिए प्रमुख रूप से उपयुक्त हैं ।

4.2.4 इसके अतिरिक्त, उच्चतम न्यायालय की मध्यस्थता और सुलह परियोजना

[86]ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176.

समिति द्वारा परिचालित मध्यस्थता प्रशिक्षण मैनुअल[87] में यह कहा गया है कि तनावपूर्ण या कटु संबंधों से उद्भूत होनेवाले सभी मामले - जिसके अंतर्गत विवाह-विषयक वाद, भरणपोषण और बच्चों की अभिरक्षा संबंधी विवाद भी हैं - सामान्यतया अनुकल्पी विवाद समाधान प्रक्रियाओं के लिए उपयुक्त होते हैं ।[88]

ख. बालक अभिरक्षा में मध्यस्थता के संबंध में अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण

4.3.1 विश्वभर में विवाह-विच्छेद और बालक अभिरक्षा को विनियमित करने वाली विधि में अनेक भिन्नताएं होने के बावजूद, इस संबंध में व्यापक जागरुकता है कि किसी कुटुम्ब को पृथक्करण के पश्चात् पुनः संगठित करने के सर्वोतम मार्ग में ऐसा सहमतिजन्य/न्यायिकेतर समाधान अंतर्वलित होता है, जो झगड़े को कम करता है और सहयोगपूर्ण पालनपोषण को बढ़ावा देता है ।[89]

4.3.2 वर्जिनिया विधि में यह विनिर्दिष्ट किया गया है कि "मध्यस्थता का उपयोग, जहां समुचित हो, मुकदमेबाजी के विकल्प के रूप में किया जाएगा ।"[90]मध्यस्थता के लक्ष्यों के अंतर्गत ऐसी प्रस्थापना का विकास हो सकता है जिसमें बालक की आवासिक समय-सारणी और देखभाल संबंधी व्यवस्थाओं पर और इस बात पर विचार किया गया हो कि भविष्य में माता-पिता के बीच विवादों का निपटान किस प्रकार किया जाएगा ।[91] तथापि, न्यायालय, मध्यस्थता के लिए निर्देश करने संबंधी समुचितता का निर्धारण करते समय, एक पक्षकार के समावेदन के आधार पर, यह अभिनिश्चित करेगा कि क्या कुटुम्ब में दुर्व्यवहार करने का पूर्ववृत्त है ।[92] मध्यस्थ को संदत्त की जाने वाली फीस कानून द्वारा तय की जाती है और उसका संदाय सरकार द्वारा किया जाता है ।[93] यद्यपि कानूनी स्कीम में अभिव्यक्त रूप से ऐसा नहीं कहा गया है, तथापि ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालयों की यह बाध्यता है कि

---

[87]यह मैनुअल http:supremecourtofindia.nic.in/MEDIATION%20TRAINING%20MANUAL%20OF%20INDIA.pdf पर उपलब्ध है ।

[88]मध्यस्थता प्रशिक्षण मैनुअल, प. 67 पर, http:supremecourtofindia.nic.in/MEDIATION%20TRAINING%20MANUAL%20OF%20INDIA.pdf पर उपलब्ध है ।

[89]ज्ञानकारलो तमांजा एट अल, इटली में पृथक्करण और विवाह-विच्छेद: अभिभावकता, बच्चों की अभिरक्षा और कौटुम्बिक मध्यस्थता, 51(4) कुटुम्ब न्यायालय रेव. 557, 557(2013).

[90]वी. ए. कोड एन.§20-124.2(ए).

[91]वी. ए. कोड एन. §20-124.2(ए).

[92]वी. ए. कोड एन. §20-124.4.

[93]वी. ए. कोड एन. §20-124.4 ("किसी अभिरक्षा, सहारा या मुलाकात संबंधी मामले में नियुक्त किसी मध्यस्थ की फीस प्रति नियुक्ति 100 डालर होगी और उसका संदाय कामनवैल्थ द्वारा 16.1-267 की उपधारा ख के अनुसरण में नियुक्तियों के लिए किए जाने वाले संदाय के लिए समायोजित निधियों में से किया जाएगा")।

वे यह सुनिश्चित करें कि मध्यस्थता वाली सहमति ही बालक के सर्वोत्तम हित में है ।[94]

4.3.3 दक्षिणी अफ्रीका की विधि भी मध्यस्थता को प्रोत्साहित करती है । उसमें कहा गया है कि, किसी बालक से संबंधित किसी मामले में, "ऐसी पहल का अनुसरण किया जाना चाहिए, जो कि सुलह और समस्या-समाधान के लिए सहायक है और विवादात्मक पहल से बचना चाहिए ।"[95] बाल न्यायालय, विनिर्दिष्ट रूप से किसी मुद्दे के संबंध में विनिश्चय करने से पूर्व मध्यस्थता करने का आदेश कर सकेगा, किन्तु उसे ऐसा करने से पूर्व अनेक कारकों पर विचार करना चाहिए: बालक की भेद्यता, बालक की कार्यवाहियों में भाग लेने की योग्यता, कुटुम्ब के भीतर शक्ति-संबंधी नातेदारी और पक्षकारों द्वारा किए गए किन्हीं अभिकथनों की प्रकृति ।[96] मध्यस्थता का प्रयोग ऐसे मामले में नहीं किया जा सकता है, जिसमें किसी बालक का अभिकथित दुरुपयोग अंतर्वलित हो ।[97] जहां माता-पिता मध्यस्थता के माध्यम से किसी सहमति पर पहुंचते हैं वहां न्यायालय को इस बात की पुष्टि अवश्य करनी चाहिए कि वह सहमति बालक के सर्वोत्तम हित में है ।[98] इसके साथ-साथ, जब विच्छिन्न-विवाह माता-पिता, जो पैतृक अधिकारों और उत्तरदायित्वों के सहधारक हैं, अपने अधिकारों का प्रयोग करने में कठिनाइयां अनुभव कर रहे हैं तब उन्हें न्यायालय की सहायता की ईप्सा करने से पूर्व पालनपोषण संबंधी किसी योजना पर सहमत होने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए ।[99] माता-पिता को पालनपोषण संबंधी योजना तैयार करते समय या तो कतिपय विनिर्दिष्ट लोगों (उदाहरणार्थ, किसी सामाजिक कार्यकर्ता) की सहायता अवश्य लेनी चाहिए या उन्हें मध्यस्थता से गुजरना चाहिए ।[100]

4.3.4 चीन में, विवाह-विच्छेद के मामले में कार्यवाही करने वाला न्यायालय "मध्यस्थता करेगा।"[101] तथापि, घरेलू हिंसा के मामलों में आज्ञापक मध्यस्थता की आलोचना उसे समस्यापूर्ण मानकर की गई है - ऐसे मामलों में मध्यस्थता द्वारा हुई

---

[94]देखिए वा.प्रेक. फैमिली ला 15:14(i)(2014 एडी.)(एक ऐसे मामले में से उद्धरण प्रस्तुत करते हुए जहां एक विचारण न्यायाधीश ने यह निष्कर्ष निकाला कि किसी मध्यस्थ के अधिनिर्णय को यह अवधारित किए बिना कि वह अधिनिर्णय बालक के सर्वोत्तम हित में है अथवा नहीं, पूरी तरह से प्रवर्तित करना लोक नीति के प्रतिकूल होगा और जबकि मध्यस्थ के विनिश्चय को महत्व दिया जा सकता है किन्तु इसका प्रयोग न्यायालय को बालक के सर्वोत्तम हितों का अवधारण करने संबंधी उसकी अधिकारिता से वंचित करने के लिए नही किया जा सकेगा ।

[95]2005 का चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 38,§6(4).

[96]2005 का चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 38,§49.

[97]2005 का चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 38,§71(2).

[98]2005 का चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 38,§72.

[99]2005 का चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 38,§33(2).

[100]2005 का चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 38,§33(5).

[101]मैरिज लॉ ऑफ दि पीपल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना (1980), अनुच्छेद 32.

सहमतियां ऐसे पक्षकारों के बीच हुई बातचीत के परिणामस्वरूप नहीं हुई होंगी जिनकी सौदेबाजी करने की शक्ति समान हो ।[102]

4.3.5 कनाडा में, कौटुम्बिक मध्यस्थता को व्यापक रूप से, मुकदमेबाजी के अनुकल्प के रूप में बढ़ावा दिया जाता है ।[103]डायवोर्स ऐक्ट (विवाह-विच्छेद अधिनियम), 1985 में विवाह-विच्छेद करने वाले पति या पत्नी की ओर से कार्यवाही करने वाले प्रत्येक वकील या अधिवक्ता से यह अपेक्षा की गई है कि वह पति या पत्नी से उन मामलों पर बातचीत करने के औचित्य के संबंध में चर्चा करे जो पालनपोषण संबंधी किसी आदेश या किसी अभिरक्षा आदेश का विषय हो सकते हैं और पति या पत्नी को ऐसी मध्यस्थता सुविधाओं की जानकारी दे जो इसमें सहायक हो सकती हैं ।[104] वकील को न्यायालय के समक्ष यह प्रमाणपत्र अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए कि उसने अपने मुवक्किल के साथ इसकी चर्चा की है ।[105] इसके अतिरिक्त, कनाडा की कौटुम्बिक विधि में यह उपबंध है कि ऐसे माता-पिता को, जो सहमत नहीं हो सकते हैं, किसी न्यायाधीश के समक्ष उपस्थित होने से पूर्व मध्यस्थता जानकारी सत्र में अवश्य भाग लेना चाहिए ।[106] ऐसे सत्र में मध्यस्थता की प्रक्रिया के संबंध में जानकारी दी जाती है, जिसके अंतर्गत मध्यस्थता की प्रकृति और उसके उद्देश्य, इस प्रक्रिया में अंतर्वलित कदम, मध्यस्थ की भूमिका और पति और पत्नी द्वारा निभाई गई भूमिकाएं भी आती हैं ।[107] पति-पत्नी, इस सत्र में भाग लेने के पश्चात, मध्यस्थता की कार्यवाही कर सकते हैं या विधिक कार्यवाहियां जारी रख सकते हैं । प्रान्तीय विधियों में भी मध्यस्थता के लिए उपबंध किए गए हैं ।[108] उदाहरणार्थ, क्यूबेक प्रांत में, विवाह-विच्छेद करने वाले ऐसे दंपत्ति, जिनके बालक हैं, पृथक्करण, विवाह-विच्छेद, सिविल यूनियन (विवाह) के विघटन, बालक अभिरक्षा, पति-पत्नी संबंधी या बालक संभाल या किसी विद्यमान विनिश्चय के पुनर्विलोकन संबंधी अपने आवेदन में बातचीत या

---

[102]चार्लोट जर्मने एट अल, मैंडेटरी कस्टडी मेडिएशन एंड ज्वाइंट कस्टडी आर्डर्स इन कैलिफोर्निया: दि डेंजर फार विक्टिम्स ऑफ डोमेस्टिक वायलेंस, 1(1) बार्कले न्या. जेंडर एल. एंड जस्ट. 175, 176(2013);साधारणतया देखिए डेनिस पी. सकूजो एट एल, मैंडेटरी कस्टडी मेडिएशन: इम्पीरिकल एवीडेंस ऑफ इनक्रीस्ड रिस्क फार डोमेस्टिक वायलेंस विक्टिम्स एंड देयर चिल्ड्रन (2003), जो http://www.ncjrs.gov/pdffiles/nij/grants/195422.pdf. पर उपलब्ध है ।

[103]फ्रेंसाइन सायर इट एल, फैमिली लाइफ, पेरेंटल सैपरेशन एंड चाइल्ड कस्टडी इन कनाडा: ए फोकस ऑन क्यूबेक, 51(4) फैमिली कोर्ट रेव. 522, 528(2013).

[104]डायवोर्स ऐक्ट, 1985 §9(2).

[105]डायवोर्स ऐक्ट, 1985 §9(3).

[106]फ्रेंसाइन सायर इट एल, फैमिली लाइफ, पेरेंटल सैपरेशन एंड चाइल्ड कस्टडी इन कनाडा: ए फोकस ऑन क्यूबेक, 51(4) फैमिली कोर्ट रेव. 522, 528(2013).

[107]यथोक्त

[108]यथोक्त

समझौते के दौरान किसी वृत्तिक मध्यस्थ की सेवाएं प्राप्त कर सकते हैं ।[109] कौटुम्बिक मध्यस्थता सेवा द्वारा पांच घंटे दिए जाते हैं और जब न्यायालय के किसी विद्यमान निर्णय का पुनरीक्षण करने की आवश्यकता हो, तब 2.5 घंटे और जोड़े जा सकते हैं ।[110] कुछ प्रांतीय विधियों में विवाद का समाधान करने वाले वृत्तिकों के कर्तव्य[111] और कौटुम्बिक मध्यस्थों के लिए अपेक्षित अर्हताएं भी विनिर्दिष्ट की गई हैं ।[112]

4.3.6 यह अध्याय कौटुम्बिक मामलों में मध्यस्थता के संबंध में भारत में विद्यमान विधि और ऐसी मध्यस्थता को अन्य देशों में क्रियान्वित करने की रीति से अवगत कराता है । आगामी अध्याय में बालक अभिरक्षा संबंधी मामलों को विनिश्चित करने के लिए अन्य महत्वपूर्ण विचारणीय बातों पर चर्चा की जाएगी ।

---

[109]फ्रेंसाइन सायर इट एल, फैमिली लाइफ, पेरेंटल सैपरेशन एंड चाइल्ड कस्टडी इन कनाडा: ए फोकस ऑन क्यूबेक, 51(4) फैमिली कोर्ट रेव. 522, 528(2013).

[110]यथोक्त

[111]देखिए, उदाहरणार्थ, ब्रिटिश कोलम्बिया फैमिली लॉ ऐक्ट §8 जो http://www.bclaws.ca/EPLibraries/bclaws_new/document/ID/freeside/00_11025_01 पर उपलब्ध है ।

[112]देखिए, उदाहरणार्थ, ब्रिटिश कोलम्बिया फैमिली लॉ ऐक्ट रेग्युलेशन्स, बी. सी. रजि.347/2012,§§4-5, जो http://www.bclaws.ca/civix/document/id/complete/statreg/331105891. पर उपलब्ध है ।

अध्याय 5

बालक अभिरक्षा संबंधी मामलों का विनिश्चय करने के लिए विचारणीय बातें

5.1 जैसाकि पूर्व में चर्चा की गई है, बालक अभिरक्षा संबंधी मामलों में मार्गदर्शी सिद्धांत बालक के कल्याण का होता है । तथापि, किसी विशिष्ट मामले में यह अवधारित करना कठिन हो सकता है कि कौनसी विनिर्दिष्ट अभिरक्षा या मुलाकात व्यवस्था बालक के लिए कल्याणकर होगी- इस मानक से कुछ व्यावहारिक मार्गदर्शन प्राप्त होता है ।[113] इसी कारण, न्यायाधीशों और अन्य विनिश्चयकर्ताओं के लिए इस संबंध में दिशानिर्देश होना आवश्यक है कि इस मानक को किस प्रकार क्रियान्वित किया जाए । अनेक संगठनों ने बालक अभिरक्षा मूल्यांकन करने के लिए मानक और दिशानिर्देश प्रकाशित किए हैं ।[114] निम्नलिखित विश्लेषण प्रमुखतः संयुक्त राज्य अमेरिका के राज्यों पर आधारित है क्योंकि उनके बारे में यह पाया गया था कि उसमें अत्यंत पूर्णतः विकसित दिशानिर्देश हैं ।[115]

क. सर्वोत्तम हित मानक के लिए विचारणीय कारक

5.2 अनेक अधिक्षेत्रों में ऐसे कानून हैं जिनमें न्यायालयों को, जब वे किसी बालक के सर्वोत्तम हितों पर विचार करते हैं, मार्गदर्शित करने के लिए विनिर्दिष्ट कारक उपवर्णित किए गए हैं । साधारणतया, इन कारकों का संबंध इन बातों से होता है: बालक की शारीरिक और मानसिक दशा; माता और पिता में से प्रत्येक की शारीरिक और मानसिक दशा; माता और पिता दोनों से बालक का संबंध; अन्य महत्वपूर्ण लोगों (भाई-बहनों, विस्तारित कौटुम्बिक सदस्यों, समकक्षों, आदि) के संबंध में बालक की आवश्यकताएं; बालक की देखरेख में माता और पिता दोनों में से प्रत्येक द्वारा निभाई गई भूमिका है और क्या भूमिका निभाएंगे; माता-पिता में से प्रत्येक की बालक के दूसरे माता या पिता से संपर्क और नातेदारी में सहारा देने की समर्थता; बालक से संबंधित विवादों को सुलझाने में माता-पिता में से प्रत्येक की समर्थता; बालक की अधिमानता; दुर्व्यवहार का कोई इतिवृत्त; और बालक का स्वास्थ्य, उसकी सुरक्षा और

---

[113]लौरा वुडवर्ड टोले इट अल, इम्प्रूविंग दि क्वालिटी ऑफ चाइल्ड कस्टडी इवैल्युएशन्स: ए सिस्टेमेटिक मॉडल, 2(स्प्रिंगर 2012)(टिप्पण- "इन (मामलों) में अंतर्निहित प्रमुख मानकों की स्पष्टता और व्याख्या की कमी – बालक के सर्वोत्तम हित") ।

[114]लौरा वुडवर्ड टोले इट अल, इम्प्रूविंग दि क्वालिटी ऑफ चाइल्ड कस्टडी इवैल्युएशन्स: ए सिस्टेमेटिक मॉडल, 15 (स्प्रिंगर 2012)।

[115]अनेक अन्य देशों में लिखित दिशानिर्देश बिल्कुल भी नहीं हैं (कम से कम सहज सुलभ रूप में नहीं हैं) । संयुक्त राज्य अमेरिका के राज्यों के दिशानिर्देश आसानी से उपलब्ध थे और उनके बारे में या पाया गया कि उनमें ऐसे सभी मुख्य मुद्दों और चुनौतियों का उल्लेख किया गया है, जो बालक अभिरक्षा संबंधी विवादों के दौरान उद्भूत हो सकते हैं ।

उसका कल्याण ।[116] तथापि ये कारक आत्यांतिक नहीं हैं और कुछ कानूनों में स्पष्टतः यह उपदर्शित किया गया है कि न्यायालयों को ऐसे अन्य कारकों पर भी विचार करना चाहिए जो न्यायालय, निर्धारण के लिए आवश्यक और उचित समझे ।[117]

ख. बालक की अधिमानता का अवधारण

5.3.1 अभिरक्षा के मामलों में बालक की अधिमानता पर साधारणतया तब विचार किया जाता है यदि बालक पर्याप्त रूप से बुद्धिमान और परिपक्व है ।[118] अधिमानता भी युक्तिसंगत होनी चाहिए - न्यायालय द्वारा बालक की इच्छाओं पर तब विचार नहीं किया जाएगा यदि, उदाहरणार्थ, वह इस बात पर आधारित है कि माता-पिता में से किस के घर में बेहतर खिलौने हैं ।[119] बालक की अधिमानता का अवधारण करते समय, कुछ न्यायालय बालक का साक्षात्कार न्यायालय चैम्बरों में करेंगे(माता-पिता में से प्रत्येक से उनकी उपस्थिति के बिना ऐसा करने की अनुज्ञा लेने के पश्चात्) ।[120] वहां अटर्नी उपस्थित हो सकते हैं किन्तु साक्षात्कार के दौरान उन्हें प्रश्न पूछने के

---

[116]देखिए वीए. कोड एन. §20-124.3; कोलो. रेव. स्टेट. एन. §14-10-124(1.5)(ए);वैस्ट्स एन. कैल. फैम. कोड §3011.

[117]वीए. कोड एन. §20-124.3(10); 15 वी.एस.ए.§665 भी देखिए ("न्यायालय बालक के सर्वोत्तम हितों से मार्गदर्शित होगा और वह <u>कम से कम</u> निम्नलिखित कारकों पर विचार करेगा")(जोर देने के लिए रेखांकित); कोलो. रेव. स्टेट. एन. §14-10-124(1.5)(ए) ("न्यायालय, पालनपोषण के समय के प्रयोजनों के लिए बालक के सर्वोत्तम हितों का अवधारण करते समय सभी सुसंगत कारकों पर विचार करेगा, जिसके अंतर्गत..... हैं")।

[118]वीए. कोड एन. §20-124.3(8)(न्यायालयों को तब "बालक की युक्तिसंगत अधिमानता पर विचार करना चाहिए यदि न्यायालय यह समझता है कि बालक ऐसी अधिमानता अभिव्यक्त करने के लिए युक्तियुक्त रूप से बुद्धिमान, सूझबूझ, आयु और अनुभव वाला है"); कोलो.रेव.स्टेट.एन.§14-10-124(1.5)(ए)(II)(न्यायालयों को "बालक की इच्छाओं पर विचार करना चाहिए यदि वह पालनपोषण की समय-सारणी के बारे में तर्कसंगत और स्वतंत्र अधिमानताएं अभिव्यक्त करने के लिए पर्याप्त रूप से परिपक्व है"); साउथ अफ्रीका चिल्ड्रन ऐक्ट सं. 2005(2005 का 38),§10 ("प्रत्येक ऐसे बालक को, जिसकी आयु, परिपक्वता और विकास का चरण ऐसा है कि वह उस बालक से संबंधित किसी मामले में भाग लेने में समर्थ बनाता है, किसी समुचित तरीके से उसमें भाग लेने का अधिकार प्राप्त है और बालक द्वारा अभिव्यक्त विचारों पर सम्यक् रूप से विचार किया जाना चाहिए ।") ।

[119]आरों थॉमस, ए चाइल्ड प्रेफ्रेंस इन एरिज़ोना कस्टडी प्रोसीडिंग्स, डायवोर्सनेट, http://www.divorcenet.com/resources/a-childs-preference-arizone-custody-proceedings.html(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

[120]आरों थॉमस, ए चाइल्ड प्रेफ्रेंस इन मैरीलैंड कस्टडी प्रोसीडिंग्स, डायवोर्सनेट, http://www.divorcenet.com/resources/a-childs-preference-maryland-custody-proceedings.html(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया); स्लेपको, स्लेपको एंड एसोसिएट्स, इंक., चाइल्ड प्रफ्रेंस एंड अवार्डिंग कस्टडी इन रोडे आइसलेंड, एचजी.ओआरजी. लीगल रिसोर्सिस, http://www.hg.org/article.asp?id=18641(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

लिए अनुज्ञात किया जा सकता है अथवा नहीं भी किया जा सकता है ।[121] न्यायाधीश, प्रायः साक्षात्कार का अभिलेख तैयार करेगा(उदाहरणार्थ, न्यायालय रिपोर्टर का प्रयोग करके)[122] किन्तु न्यायाधीश यह आदेश भी कर सकता है कि उस साक्षात्कार को गोपनीय रखा जाए, यदि ऐसा करना बालक के सर्वोत्तम हित में होगा ।[123]

5.3.2 अनुकल्पतः न्यायालय साक्षात्कार की बजाय बालक के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए वादार्थ संरक्षक नियुक्त कर सकता है ।[124] वादार्थ संरक्षक इस संबंध में एक रिपोर्ट प्रस्तुत कर सकता है कि बालक के सर्वोत्तम हित में क्या है, जिसके अंतर्गत अभिरक्षा के लिए बालक की इच्छाएं भी आती हैं ।[125] वादार्थ संरक्षक बालक की अधिमानताओं के बारे में साक्ष्य भी दे सकता है ।[126] न्यायालय बालक की राय के बारे में साक्ष्य देने के लिए कोई सामाजिक कार्यकर्ता या अन्य मानसिक स्वास्थ्य वृत्तिक रख सकता है।[127]

ग. बालक के अभिलेखों तक पहुंच

5.4 साधारणतया, माता-पिता दोनों को बालक के अभिलेख (चिकित्सीय, शैक्षणिक,

---

[121]आरों थॉमस, ए चाइल्ड प्रेफ्रेंस इन मैरीलैंड कस्टडी प्रोसीडिंग्स, डायवोर्सनेट, http://www.divorcenet.com/resources/a-childs-preference-maryland-custody-proceedings.html(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया); स्लेपको, स्लेपको एंड एसोसिएट्स, इंक., चाइल्ड प्रफ्रेंस एंड अवार्डिंग कस्टडी इन रोडे आइसलेंड, एचजी.ओआरजी. लीगल रिसोर्सिस, http://www.hg.org/article.asp?id=18641(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

[122]स्लेपको, स्लेपको एंड एसोसिएट्स, इंक., चाइल्ड प्रेफ्रेंस एंड अवार्डिंग कस्टडी इन रोडे आइसलेंड, एचजी. ओआरजी. लीगल रिसोर्सिस, http://www.hg.org/article.asp?id=18641(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

[123]आरों थॉमस, ए चाइल्ड प्रफ्रेंस इन एरिज़ोना कस्टडी प्रोसीडिंग्स, डायवोर्सनेट, http://www.divorcenet.com/resources/a-childs-preference-arizona-custody-proceedings.html(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

[124]आरों थॉमस, ए चाइल्ड प्रेफ्रेंस इन मैरीलैंड कस्टडी प्रोसीडिंग्स, डायवोर्सनेट, http://www.divorcenet.com/resources/a-childs-preference-maryland-custody-proceedings.html(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया); स्लेपको, स्लेपको एंड एसोसिएट्स, इंक., चाइल्ड प्रफ्रेंस एंड अवार्डिंग कस्टडी इन रोडे आइसलेंड, एचजी.ओआरजी. लीगल रिसोर्सिस, http://www.hg.org/article.asp?id=18641(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

[125]यथोक्त

[126]आरों थॉमस, ए चाइल्ड प्रेफ्रेंस इन मैरीलैंड कस्टडी प्रोसीडिंग्स, डायवोर्सनेट, http://www.divorcenet.com/resources/a-childs-preference-maryland-custody-proceedings.html(अंतिम बार 5 मई, 2015 को देखा गया) ।

[127]यथोक्त

आदि) तक पहुंच अनुज्ञात की जाती है ।[128] तथापि, जहां सूचना के प्रकटन (उदाहरणार्थ, माता-पिता में से किसी एक का या बालक का वर्तमान पता) अपहानि का जोखिम पैदा कर सकता है, वहां न्यायालय सूचना के प्रकटन को निवारित कर सकेगा ।[129]

घ. पितामह-पितामही और मातामह-मातामही पालनपोषण समय

5.5 अभिरक्षा संबंधी आदेश के लिए किसी बालक के सर्वोत्तम हित का मूल्यांकन करते समय न्यायालय साधारणतया बालक के मित्रों, विस्तारित कौटुम्बिक सदस्यों (जिसके अंतर्गत पितामह-पितामही और मातामह-मातामही आते हैं) और अन्य महत्वपूर्ण व्यक्तियों से संबंध पर विचार करने के लिए सशक्त होते हैं । अनेक अधिक्षेत्रों में, ऐसे संबंध बालक के स्तर के सर्वोत्तम हित के लिए कानूनी कारकों में स्पष्ट रूप से सूचीबद्ध किए जाते हैं । उदाहरणार्थ, वर्जिनिया राज्य की विधि में न्यायालय से यह अपेक्षा की गई है कि वह बालक के अन्य महत्वपूर्ण संबंधों पर सम्यक् रूप से विचार करते हुए बालक की आवश्यकताओं पर विचार करे, जिसमें उसके भाई-बहन, समकक्ष और विस्तारित कौटुम्बिक सदस्य भी आते हैं ।[130] इस प्रकार, न्यायालय पितामह-पितामही और मातामह-मातामही को, जहां भी समुचित हो, मुलाकात के अधिकार प्रदान कर सकते हैं ।

ङ मध्यस्थता

5.6 जैसा कि इस रिपोर्ट में इससे पूर्व चर्चा की गई है, अभिरक्षा और पालनपोषण संबंधी अन्य विवादों का समाधान करने के लिए मध्यस्थता की पद्धति को व्यापक

---

[128]देखिए, उदाहरणार्थ, एन.सी.जी.एस.ए.§50-13.2(बी) ("न्यायालय के इसके प्रतिकूल किसी आदेश के न होने पर, प्रत्येक माता-पिता को अप्राप्तवय बालक के ऐसे अभिलेखों तक समान पहुंच होगी, जिनमें बालक के स्वास्थ्य, उसकी शिक्षा और उसका कल्याण अंतर्वलित हो ।") डब्ल्यू. वीए. कोड, §48-9-601;एम.जी.एल.ए. 208§31 ("अप्राप्तवय बालकों की अभिरक्षा से संबंधित किसी आदेश या निर्णय की प्रविष्टि गैर-अभिरक्षी माता-पिता की बालक के शैक्षणिक, चिकित्सीय, अस्पताल या अन्य स्वास्थ्य संबंधी अभिलेखों तक पहुंच रखने को नकारेगी नहीं या उनकी समर्थता में अड़चन पैदा नहीं करेगी....."") ।

[129]एम.जी.एल.ए. 208 §31 ("यदि बालक या किसी पक्षकार के वर्तमान या पूर्व पते का अप्रकटन ऐसे बालक या पक्षकार का स्वास्थ्य, सुरक्षा या कल्याण सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है तो न्यायालय यह आदेश कर सकेगा कि ऐसे पते से संबधित ऐसे अभिलेख का कोई भाग ऐसे गैर-अभिरक्षी माता-पिता को प्रकट नहीं किया जाएगा") ।

[130]वी ए.कोड एन. §20-124(3);कोलो. रेव. स्टेट. एन. §14-10-124(1.5)(ए)(III)(न्यायालय को "बालक के अपने माता-पिता, अपने भाई-बहनों, और ऐसे अन्य व्यक्ति के साथ, जो बालक के सर्वोत्तम हितों को महत्पूर्ण रूप से प्रभावित कर सकता है, परस्पर-क्रिया और अंतर्संबंध पर अवश्य विचार करना चाहिए"); 15 वी.एस.ए.§ 665(बी)(7) (न्यायालय को "ऐसे किसी अन्य व्यक्ति के साथ, जो बालक पर महत्वपूर्ण रूप से प्रतिकूल प्रभाव डाल सकता है, बालक के संबंध पर अवश्य विचार करना चाहिए") ।

रूप से अधिमानता दी जाती है[131] और अनेक अधिक्षेत्र इस बारे में दिशानिर्देश प्रदान करते हैं कि ऐसे विवादों में मध्यस्थता का कब और किस प्रकार उपयोग किया जाना चाहिए । उदाहरणार्थ, ऐसे मामलों में, जिनमें गाली-गलौज और दुर्व्यवहार अंतर्वलित होता है, मध्यस्थता को समुचित नहीं माना जाता है ।[132] कुछ अधिक्षेत्र विवाह-विच्छेद करने वाले दंपत्तियों के लिए (कम से कम एक सीमा तक) निःशुल्क मध्यस्थता प्रदान करते हैं जो कि आगे (खर्चीली मुकदमेबाजी के एक अनुकल्प के रूप में) सहयोगी समाधान को बढ़ावा दे सकती है ।[133]

च. स्थान-परिवर्तन

5.7 जब माता-पिता दोनों के पास बालक के संबंध में विधिक अधिकार हों तब स्थान-परिवर्तन संबंधी विवाद चुनौती पैदा कर सकते हैं । एक ओर, आज के अत्यंत गतिशील समाज में माता-पिता को काम के अवसरों या अन्य महत्वपूर्ण कारणों से स्थान-परिवर्तन के लिए अनुज्ञात किया जाना चाहिए । दूसरी ओर, ऐसे स्थान-परिवर्तन से माता या पिता के बालक से मुलाकात करने की समय-सारणी में विघ्न पड़ सकता है । न्यायालय, साधारणतया ऐसे विवादों का समाधान अनेक सिद्धांतों का आश्रय लेकर करते हैं । प्रथमतः, कुछ अधिक्षेत्रों में, माता या पिता को स्थान-परिवर्तन के लिए(या तो न्यायालय से या दूसरे माता या पिता से) अनुज्ञा लेने की आवश्यकता नहीं होती है यदि वह केवल स्थानीय स्थान-परिवर्तन है या उससे दूसरे माता या पिता की मुलाकात संबंधी समय-सारणी प्रभावित नहीं होगी ।[134] द्वितीयतः, ऐसे माता या पिता को, जो स्थान-परिवर्तन करना चाहता है, माता या पिता में से दूसरे को अग्रिम लिखित सूचना देनी चाहिए । उदाहरणार्थ, वर्जिनिया में तीस दिन की अग्रिम लिखित सूचना देना अपेक्षित है ।[135] इससे माता या पिता को इस प्रक्रिया का न्यायालय में विरोध करने का समय मिल जाता है । अन्य प्रमुख विचारणीय बात यह है कि क्या प्रस्तावित स्थान-परिवर्तन बालक के सर्वोत्तम हित में

---

[131]देखिए उपर्युक्त अध्याय 4.

[132]यथोक्त

[133]यथोक्त

[134]उटाह कोड एन. §30-3-37(1) ("इस धारा के प्रयोजनों के लिए, स्थान-परिवर्तन से दूसरे माता या पिता के निवास-स्थान से 150 मील या उससे अधिक संचलन अभिप्रेत है।"); कोलो. रेव. स्टेट. एन. §14-10-129(1)(ए)(II) (ऐसे स्थान-परिवर्तनों के लिए न्यायालय के अनुमोदन की अपेक्षा है, "जिससे बालक और दूसरे पक्षकार के बीच भौगोलिक संबंधों में सारवान् परिवर्तन होता है") ।

[135]वी ए.कोड एन.§ 20-124.5; कोलो. रेव. स्टेट. एन. § 14-10-129(1)(ए)(II) भी देखिए ("वह पक्षकार जिसका बालक के साथ ऐसे निवास में स्थान-परिवर्तन करने का आशय है जिससे बालक और दूसरे पक्षकार के बीच भौगोलिक बंधन में सारवान परिवर्तन होता है, दूसरे पक्षकार को यथासाध्य शीघ्रता से, लिखित में अपने स्थान-परिवर्तन करने के आशय की सूचना देगा ...."); उटाह कोड एन. § 30-3-37(2)("स्थान-परिवर्तन करने वाला पिता या माता दूसरे पिता या माता को आशयित स्थान-परिवर्तन की 60 दिन की अग्रिम सूचना देगा ।")।

है ।[136]न्यायालय इस बात पर भी विचार कर सकेगा: क्या स्थान-परिवर्तन किसी विधिसम्मत प्रयोजन के लिए है; स्थान-परिवर्तन की ईप्सा करने या उसका विरोध करने के लिए माता और पिता के कारण;माता और पिता तथा बालक के बीच संबंधों की क्वालिटी; स्थान-परिवर्तन का बालक के स्थान-परिवर्तन न करने वाले माता या पिता के साथ भावी संपर्क की मात्रा और क्वालिटी पर प्रभाव; वह मात्रा, जिस तक स्थान-परिवर्तन करने वाले माता या पिता और बालक के जीवन में स्थान-परिवर्तन द्वारा आर्थिक, भावनात्मक और शैक्षणिक रूप से संवर्धन होगा; और उपयुक्त मुलाकात व्यवस्था के माध्यम से स्थान-परिवर्तन न करने वाले पिता या माता ऑर बालक के बीच संबंध को परिरक्षित रखने की साध्यता ।[137]

छ. विनिश्चय करना

5.8 ऐसे अनेक मुख्य क्षेत्र हैं जिनका अभिरक्षा संबंधी आदेश या पालनपोषण योजना में ध्यान रखा जाना चाहिए - ये विवाद के सामान्य क्षेत्र होते हैं इसलिए यदि माता-पिता में से प्रत्येक की भूमिका विनिर्दिष्ट करने वाले स्पष्ट नियम हों तो उचित होगा (अर्थात्, कौनसे विनिश्चय व्यक्तिगत रूप से किए जा सकेंगे और कौन से विनिश्चय संयुक्त रूप से किए जाने चाहिएं):

1. चिकित्सा: बालक को अस्पताल में भर्ती किया जाना है अथवा नहीं और बालक की कोई अनापातकालीन शल्य प्रक्रिया कराई जानी है अथवा नहीं ।

2. शिक्षा: विद्यालय का चयन, संवर्धन कक्षाएं, पाठ्यक्रम और विषय और बालक को विद्यालय के किसी विशेष ट्रिप या प्रमोद-भ्रमण या ट्यूशन में जाना है अथवा नहीं ।

3. धर्म: बालक की धार्मिक शिक्षा, उपासना स्थलों पर जाना, धार्मिक समारोह करना, आदि ।

4. पाठ्येतर गतिविधियां : बालक के हित और रूझान पर विचार करते हुए, पाठ्येतर गतिविधियों का चयन ।

5. माता और पिता में से एक के साथ यात्रा करना: बालक अपनी छुट्टियां कहां व्यतीत करेगा और वह जानकारी जो माता-पिता में एक ने दूसरे को देनी है (उदाहरणार्थ, विस्तृत यात्रा कार्यक्रम) ।

---

[136]वी ए. प्रेक्. फैमिली लॉ§ 15:11(2015) एडी.(जिसमें वर्जिनिया में स्थान-परिवर्तन के मानकों पर चर्चा की गई है); उटाह कोड एन.§30-3-37(4)("स्थान-परिवर्तन की सूचना का पुनर्विलोकन करने संबंधी सुनवाई में न्यायालय यह अवधारित करते समय कि क्या किसी अभिरक्षणीय माता या पिता का स्थान-परिवर्तन बालक के सर्वोत्तम हित में है, ऐसे किसी अन्य कारकों पर विचार करेगा, जो न्यायालय सुसंगत समझे.....।")।

[137]कोन. जन. स्टेट. एन. §46बी-56डी(बी).

ज. पालनपोषण योजना

5.9 अनेक अधिक्षेत्रों में विवाह-विच्छेद करने वाले माता-पिता से (या तो संयुक्ततः या व्यक्तिगत रूप से) न्यायालय के समक्ष साझी पालनपोषण योजना प्रस्तुत करना अपेक्षित है । उस योजना में, विनिश्चय करने वाले मुख्य क्षेत्रों का उल्लेख होना चाहिए, जिनके अंतर्गत निम्नलिखित हैं: बालक की शिक्षा; बालक के स्वास्थ्य की देखरेख; धार्मिक शिक्षा; पक्षकारों के बीच बालक के पालनपोषण संबंधी विनिश्चयों और कर्तव्यों की बाबत विवादों के समाधान के लिए प्रक्रियाएं; और वह कालावधि, जिसके दौरान प्रत्येक पक्ष बालक को अपने पास रखेगा या उससे मुलाकात करेगा, जिसके अंतर्गत छुट्टियां और दीर्घावकाश भी हैं या वह प्रक्रिया जिसके द्वारा ऐसी कालावधियों का अवधारण किया जाएगा ।[138] कुछ अधिक्षेत्र (माता-पिता के बीच तथा बालक और अनाभिरक्षणीय माता या पिता के बीच) संपर्क; दूसरे माता या पिता के निवास से और निवास तक परिवहन; यदि माता और पिता में से कोई एक स्थान-परिवर्तन करना चाहता है तो क्या किया जाना है; नियत पालनपोषण समयसारणी में परिवर्तन किस प्रकार करना है; और बालक के बारे में जानकारी के आदान-प्रदान के संबंध में अतिरिक्त मार्गदर्शन प्रदान करते हैं ।[139] पालनपोषण योजना अपने आप में कोई विधिक दस्तावेज़ नहीं होता है; इसका विधिक प्रभाव होने के लिए इसे किसी न्यायालय द्वारा अवश्य अनुमोदित किया जाना चाहिए ।[140]

झ. मुलाकात

5.10.1 अनेक अधिक्षेत्रों में मुलाकात के संबंध में विस्तृत समय-सारणियां हैं जिनका प्रयोग न्यायालय शब्दशः कर सकता है या उन्हें आवश्यकतानुसार उपांतरित कर सकता है । ये सांचे के रूप में कार्य करती है जिससे कि न्यायालय को नए सिरे से आरंभ न करना पड़े । यद्यपि ये नमूना समय-सारणियां विभिन्न अधिक्षेत्रों में भिन्न-भिन्न हैं तथापि कुछ सामान्य प्रकरण हैं । साधारणतया, समय-सारणी बालक की

---

[138]मास. जन. लॉज़ अध्याय 208§31; वाश. रेव. कोड§26.09.184.

[139]देखिए डोमेस्टिक रिलेशन्स कमेटी, इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स (2013), §1, http://www.in.gov/judiciary/rules/parenting/#_Toc348614670 पर उपलब्ध ।

[140]मास.जन. लाज़ अध्याय 208§31("गुणागुण के आधार पर किए जाने वाले विचारण में, न्यायालय पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत की गई साझी अभिरक्षा क्रियान्वयन योजनाओं पर विचार करेगा । न्यायालय साझी विधिक और भौतिक अभिरक्षा आदेश जारी कर सकेगा और इसके साथ-साथ किसी एक पक्षकार द्वारा या पक्षकारों द्वारा संयुक्त रूप से प्रस्तुत की गई साझी अभिरक्षा क्रियान्वयन योजना को स्वीकार कर सकेगा या पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत की गई योजना या योजनाओं को उपांतरित करते हुए एक योजना जारी कर सकेगा । न्यायालय योजना को खारिज भी कर सकेगा और माता और पिता में से किसी के पक्ष में एकमात्र विधिक और भौतिक अभिरक्षा संबंधी अधिनिर्णय जारी कर सकेगा ।"); वाश. रेव. कोड§26.09.187.

आयु और माता और पिता के घरों के बीच की दूरी पर निर्भर करेगी ।[141] छुट्टियों, जन्म दिवसों और विद्यालय के दीर्घावकाश का उचित आबंटन होना चाहिए । बालक के पास अपने भाई-बहनों और बालक के जीवन के अन्य महत्वपूर्ण लोगों (दादा-दादी, नाना-नानी इत्यादि) के साथ बिताने के लिए समय भी होना चाहिए । किसी छोटे बालक (विशेषकर शिशुओं) की देखभाल करने संबंधी माता या पिता की समर्थता पर विचार किया जा सकता है । पालनपोषण समय-सारणी के लिए कुछ मूलभूत विकल्प ये हैं :

- बालक का माता और पिता के बीच नियमित आधार पर (उदाहरणार्थ, दैनिक, साप्ताहिक या मासिक) आना-जाना
- जब विद्यालय सत्र में होता है तब बालक माता-पिता में से एक के पास रहता है और विद्यालय दीर्घावकाश के दौरान माता-पिता में से दूसरे के पास रहता है
- बालक प्रमुखतः माता और पिता में से एक के पास रहता है किन्तु हर दूसरे सप्ताहांत और प्रति सप्ताह 1-2 शाम माता और पिता में से दूसरे के पास जाता है (संभवतः जिसके अंतर्गत रातभर रुकना भी है)

5.10.2 इंडियाना और मिशिगन दोनों द्वारा समय-सारणी तैयार करने के संबंध में दिशानिर्देशों का उपबंध किया गया है, जिनमें यह सिफारिश की गई है कि बालक को प्रत्येक दूसरे सप्ताहांत और प्रति सप्ताह, सप्ताह में एक दिन अनाभिरक्षणीय माता या पिता के पास जाना है ।[142] इंडियाना और मिचीगन दिशानिर्देशों में छुट्टियों को बांटने की भी सिफारिश की गई है(माता-पिता में से प्रत्येक को कुछ छुट्टियां बांट दी जाती हैं) और इसके बाद प्रत्येक वर्ष उन्हें अनुकल्पी बना दिया जाता है ।[143] तथापि कुछ छुट्टियां (जैसे शीतकालीन विद्यालय दीर्घावकाश) अनुकल्पी नहीं होते बल्कि

---

[141]देखिए डोमेस्टिक रिलेशन्स कमेटी, इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स (2013), §§2-4, www.in.gov/judiciary/rules/parenting/#_Toc348614670; पर उपलब्ध; स्टेट कोर्ट एडमिनिस्ट्रेटिव आफिस, मिशिगन पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन,http://courts.mi.gov/administration/scao/resources/documents/publications/manuals/focb/pt_gdlns.pdf पर उपलब्ध; टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसिस, चाइल्ड एक्सेस एंड कस्टडी गाइडलाइन्स (2011), http://mphc.in/pdf/ChildAccess-040312.pdf पर उपलब्ध; कलराडो डिपार्टमेंट ऑफ लेबर एंड एम्पलायमेंट, कनेक्टिंग विद किड्स (2004), http://www.courts.state.co.us/userfiles/file/self_help/co_parenting_time_book2004.pdf पर उपलब्ध (अंतिम बार 2 अप्रैल, 2015 के देखा गया) ।

[142]इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स §2(डी)(1);मिशिगन पेरेंटिंग टाइम गाइंडलाइनपृ. 7.

[143]इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स §2(एफ)(2);मिशिगन पेरेंटिंग टाइम गाइंडलाइन पृ. 7-9.

माता-पिता द्वारा प्रत्येक वर्ष समान-समान बांटे जाते हैं (अर्थात्, बालक दीर्घावकाश का पहला भाग माता-पिता में से एक के साथ बिताता है और दूसरा भाग दूसरे के साथ बिताता है) ।[144] दोनों राज्यों में ऐसे माता-पिता के लिए, जो एक दूसरे से काफी दूर रहते हैं[145] और अल्पवय बालकों के लिए अतिरिक्त दिशानिर्देश भी हैं[146]

5.10.3भारत में मुलाकात के अधिकार को उच्चतम न्यायालय द्वारा रोक्सन शर्मा **बनाम** अरुण शर्मा[147] वाले मामले में परिभाषित किया गया है क्योंकि न्यायालय ने अनाभिरक्षणीय माता या पिता या पितामह-पितामही या मातामह-मातामही को ऐसे बालक या ऐसे पौत्र-पौत्री या दौहित्र-दौहित्री के साथ समय बिताने के विशेषाधिकार का आदेश किया है जो किसी अन्य व्यक्ति, प्रायः अभिरक्षणीय माता या पिता के साथ रह रहा है । उच्चतम न्यायालय ने, अनेक मामलों में अनाभिरक्षणीय माता या पिता और दादी-नानी, दत्तकग्राही माता-पिता, मामा और मामी को मुलाकात करने के अधिकार प्रदत्त किए हैं । मुलाकात के अधिकारों के लिए प्रमुख विचारणीय बात बालक का कल्याण और संबंधित नातेदार के साथ बालक की सामीप्यता होती है ।

5.10.4 उदाहरणार्थ, प्रभात कुमार **बनाम** हिमालिनी[148] वाले मामले में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि बालक के कल्याण का अवधारण देखभाल और स्नेह के उस फायदे द्वारा, जो विरोधी कुटुम्ब के ऐसे कौटुम्बिक सदस्यों को मुलाकात के अधिकार प्रदान करके अप्राप्तवय प्राप्त करेगा, किया जाता है । ऐसे फायदे को साबित करने का भार उस कौटुम्बिक सदस्य पर होता है जो उस अधिकार का दावा करता है । एक अन्य महत्वपूर्ण विचारणीय बात बालक की कौटुम्बिक सदस्य के साथ निकटता है । इस मामले में, न्यायालय ने संरक्षकता न्यायाधीश द्वारा आदेशित नियमित मुलाकात के कारण बालक और पिता के बीच प्रबलित हुए संबंध के कारण पिता और उसके नातेदारों के लिए अंतरिम मुलाकात संबंधी आदेश को कायम रखा ।

5.10.5आयोग का विश्वास है कि मुलाकात संबंधी अधिकारों के संबंध में ऐसे व्यापक दिशानिर्देश अधिकथित करना आवश्यक और उपयोगी है जो बालक के कल्याण के लिए सहायक हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि माता और पिता दोनों बालक के साथ समय व्यतीत करने में समर्थ हैं ।

---

[144]इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स §2(एफ)(2)(बी);मिशिगन पेरेंटिंग टाइम गाइंडलाइन पृ. 8-9.

[145]इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स §III;मिशिगन पेरेंटिंग टाइम गाइंडलाइन पृ. 23-34.

[146]इंडियाना पेरेंटिंग टाइम गाइडलाइन्स §II(सी)(जिसमें शिशुओं और चलने वाले शिशुओं के संबंध में चर्चा की गई है);मिशिगन पेरेंटिंग टाइम गाइंडलाइन पृ. 24-25.

[147]रोक्सन शर्मा ब. अरुण शर्मा मनु/एस.सी./0165/2015.

[148]प्रभात कुमार ब. हिमालिनी मनु/डी.ई./0016/201.

अध्याय 6

सिफारिशों का सार

6.1 इस रिपोर्ट में विधि आयोग की सिफारिशें हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता (संशोधन) विधेयक, 2015 और संरक्षक और प्रतिपाल्य (संशोधन) विधेयक, 2015 में दी गई हैं जो इस रिपोर्ट के साथ संलग्न है । ये विधेयक क्रमशः हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 और संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 का संशोधन करते हैं । विधि आयोग. इस संबंध में "संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम,1890 और हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 के कतिपय उपबंध"[149] शीर्षक वाली विधि आयोग की 83वीं रिपोर्ट(1980) और विधि आयोग की 133वीं रिपोर्ट (1989), जिसका शीर्षक "अप्राप्तवय बालकों की संरक्षकता और अभिरक्षा से संबंधित मामलों में महिलाओं के साथ भेदभाव को दूर करना और कल्याणकारी सिद्धांतों का विस्तारण"[150] था, की कुछ सिफारिशों के प्रति आनुषंगिक रूप से निर्देश करता है ।

6.2 आयोग 'अभिरक्षा, बालक संभाल और मुलाकात व्यवस्थाएं' से संबंधित नया अध्याय 2क अंतःस्थापित करने की सिफारिश करके विस्तृत विधायी पाठ प्रदान करता है । आयोग ऐसे मामलों को विनिश्चित करने में, जिसके अंतर्गत यह अवधारित करने की प्रक्रियाएं कि क्या बालक के कल्याण की पूर्ति हो गई है; मध्यस्थता के दौरान अनुसरण की जाने वाली प्रक्रियाएं; और संयुक्त अभिरक्षा के लिए मंजूरी का अवधारण करते समय विचार में लिए जाने वाले कारक भी आते हैं, न्यायालय को सहायता प्रदान करने के लिए विनिर्दिष्ट दिशानिर्देश भी प्रदान करता है । सिफारिशों के संबंध में आगामी पृष्ठों में विस्तार से चर्चा की गई है ।

क. हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम. 1956 में संशोधन

6.3 विधि आयोग इस अधिनियम में निम्नलिखित संशोधनों की सिफारिश करता है:

1. **<u>धारा 6(क)</u>:** इस धारा में अप्राप्तवय के शरीर और संपत्ति की बाबत (संयुक्त कौटुम्बिक संपत्ति में उसके अविभक्त हित को अपवर्जित करते हुए) किसी हिन्दू अप्राप्तवय के नैसर्गिक संरक्षकों की सूची दी गई है । किसी लड़के या अविवाहिता लड़की की दशा में, इस धारा में स्पष्ट रूप से यह कहा

---

[149]भारत का विधि आयोग, 83वीं रिपोर्ट, अप्रैल (1980), http://lawcommissionofindia.nic.in/51-100/Report83.pdf पर उपलब्ध ।

[150]भारत का विधि आयोग, 133वीं रिपोर्ट, अगस्त (1989), http://lawcommissionofindia.nic.in/101-169/Report133.pdf पर उपलब्ध ।

गया है कि किसी हिन्दू अप्राप्तवय का नैसर्गिक संरक्षक पिता है और उसके पश्चात् माता है । **गीता हरीहरन** बनाम **भारतीय रिजर्व बैंक**[151] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पश्चात् भी माता केवल आपवादिक परिस्थितियों में ही पिता के जीवनकाल के दौरान नैसर्गिक संरक्षण बन सकती है । संविधान के अनुच्छेद 14 में प्रतिष्ठापित समानता के सिद्धातों की पूर्ति के लिए इसमें परिवर्तन करना आवश्यक है ।

तदनुसार, विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि माता-पिता में से एक की दूसरे पर वरिष्ठता को दूर किया जाना चाहिए और यह कि माता और पिता दोनों को साथ-साथ किसी अप्राप्तवय के नैसर्गिक संरक्षण के रूप में समझा जाना चाहिए । आयोग की सिफारिश से यह भी परिणाम निकलता है कि प्रत्येक परिस्थिति में अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि होना चाहिए । कल्याण के सर्वोपरि होने की संकल्पना 1956 के अधिनियम की धारा 13 में पहले से दी गई है । आयोग धारा 6 में ऐसे संशोधन की सिफारिश करके अपनी 133वीं रिपर्ट की इन सिफारिशों की पुनः पुष्टि करता है कि किसी अप्राप्तवय और उसकी संपत्ति की बाबत माता और पिता दोनों को समान अधिकार दिए जाएं ।[152] उसने यह आशय बताकर कि दो उपबंधों (धारा 6 और धारा 13) को एक साथ पढ़ा जाए, विधि आयोग की 83वीं रिपोर्ट की सिफारिशों को भी पुनः पुष्ट कर दिया है ।[153]इस प्रकार पठन करने से आवश्यक रूप से यह विवक्षित होगा कि किसी अप्राप्तवय का न तो पिता और न ही माता, न्यायालय द्वारा, अधिकार के तौर पर, संरक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने का दावा नहीं कर सकती है जब तक कि ऐसी नियुक्ति अप्राप्तवय के कल्याण के लिए न हो ।

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 में भी इसी प्रकार के विधायी परिवर्तन हुए हैं जिसमें पिता के संरक्षक होने संबंधी आत्यांतिक और नैसर्गिक अधिकार में परिवर्तन आया है ।[154] 1890 की विधि उस समय अधिनियमित की गई थी जब महिलाओं को विधि के अनुसार सीमित अधिकार प्राप्त थे और इसमें सुधार की आवश्यकता थी । 1890 के अधिनियम की धारा 19(ख) के

---

[151](1999) 2 एस. सी. सी. 228.

[152]भारतीय विधि आयोग, 133वीं रिपोर्ट, अगस्त, 1989, ¶4.3, http://lawcommissionofindia.nic.in/101-169/Report133 पर उपलब्ध ।

[153]भारतीय विधि आयोग, 83वीं रिपोर्ट, अप्रैल, 1980, ¶6.44, पृ. 30, http://lawcommissionofindia.nic.in/51-100/Report83.pdf पर उपलब्ध ।

[154]वेंकट नरसिंह ब. पेड्डीराजू, 1970(1) ए.एल.टी.25; कुमारस्वामी मुदलियार ब. राजामल ए.आई.आर.1957 मद्रास 563.

पुराने पाठ के अनुसार, न्यायालय किसी अप्राप्तवय का संरक्षक नियुक्त नहीं कर सकता था (किसी विवाहित नारी से भिन्न) यदि अप्राप्तवय का पिता जीवित था और संरक्षक बनने के लिए अयोग्य नहीं था । स्वीय विधि (संशोधन) अधिनियम, 2010 द्वारा इस खंड में संशोधन किया गया जिसमें पिता की तरह माता को भी उसके समान निरूपित किया गया है, जिसके द्वारा विधि को अधिक साम्यापूर्ण बना दिया गया है ।[155] अतः, 1890 के अधिनियम में किए जाने वाले परिवर्तनों के संदर्भ में, आयोग की सिफारिशें मात्र एक विधि में उन विषमताओं को दूर करने के लिए हैं जिन्हें एक अन्य विधि में पहले ही दूर किया जा चुका है ।

धारा 6(क) के परन्तुक में वर्तमान में यह उपबंधित है कि जिस अप्राप्तवय ने पांच वर्ष की आयु पूरी न कर ली हो उसकी अभिरक्षा मामूली तौर पर माता के हाथ मे होगी । आयोग का यह विश्वास है कि ऐसे मामलों में, जहां न्यायालय संयुक्त रूप से अभिरक्षा मंजूर करने का विनिश्चय करता है, इस स्थिति में नम्यता अनुज्ञात की जानी चाहिए और उस उपबंध के पाठ को तदनुसार संशोधित किया जाना चाहिए ।

2. **<u>धारा 7</u>:** इस धारा में यह उपबंध है कि ऐसे दत्तक पुत्र की, जो अप्राप्तवय हो, नैसर्गिक संरक्षकता दत्तक ग्रहण पर दत्तक पिता को और उसके पश्चात् दत्तक माता को संक्रान्त हो जाती है । इस धारा की भाषा इस अर्थ में बेतुकी है कि इसमें केवल किसी दत्तक पुत्र की नैसर्गिक संरक्षकता के प्रति निर्देश किया गया है और किसी दत्तक पुत्री के प्रति निर्देश नहीं किया गया है । हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 उस समय प्रवर्तन में आया जब न्यायालयों द्वारा प्रशासित साधारण हिन्दू विधि में किसी पुत्री के दत्तक-ग्रहण को मान्यता नहीं थी । इस प्रकार, अधिनियम के पारित होने के समय पुत्रियों का दत्तक-ग्रहण केवल रूढ़ि के अधीन अनुज्ञात था न कि संहिताबद्ध विधि के अधीन । इससे वह कारण स्पष्ट हो जाता है कि इस अधिनियम के निर्माताओं ने केवल दत्तक पुत्रों की संरक्षकता को ही सम्मिलित क्यों किया और पुत्रियों के दत्तक-ग्रहण को अनदेखा क्यों किया ।[156] यह अधिनियम, हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 से भी पूर्व अधिनियमित किया गया था, जिसके द्वारा पुत्री के दत्तक-ग्रहण की विधिक स्थिति में कानूनी रूप से सुधार कर दिया गया था ।[157] पश्चातवर्ती

---

[155]स्वीय विधि (संशोधन) अधिनियम, 2010(2010 का 30), अध्याय 2..

[156]पारस दीवान, लॉ ऑफ अडोप्शन्स, माइनरिटी, गार्जियनशिप एंड कस्टडी, तीसरा संस्करण, 2000, पृ. 226.

[157]हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956(1956 का 78) §10

विधि का प्रभाव यह हुआ है कि दत्तक पिता और दत्तक माता को दत्तक बालक के नैसर्गिक संरक्षक समझा जाएगा ।[158] इसका परिणाम यह निकलता है कि हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 में भी दत्तक पुत्र और दत्तक पुत्री दोनों को नैसर्गिक संरक्षकता की परिधि के भीतर सम्मिलित किया जाना चाहिए । आयोग हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 में संशोधन द्वारा उसे हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 के अनुकूल बनाने के लिए मात्र इसमें सुधार करता है । इसके अतिरिक्त, आयोग यह सिफारिश करता है कि ऊपर दी गई धारा 6(क) की सिफारिशों और पूर्ववर्ती विधायी परिवर्तनों, जैसे स्वीय विधि (संशोधन) अधिनियम, 2010 के अनुरूप किसी दत्तक बालक के नैसर्गिक संरक्षकों में दत्तक माता और दत्तक पिता दोनों शामिल होने चाहिएं । तदनुसार, आयोग यह सिफारिश करता है कि धारा 7 को इस प्रकार संशोधित किया जाए कि ऐसे दत्तक बालक की, जो कि अप्राप्तवय है, नैसर्गिक संरक्षकता दत्तक ग्रहण पर दत्तक माता और दत्तक पिता को संक्रांत होगी ।

ख. संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 में संशोधन

6.4 विधि आयोग इस अधिनियम में निम्नलिखित संशोधनों की सिफारिश करता है :

1. **<u>धारा 17</u>:** इस धारा में न्यायालय द्वारा संरक्षक नियुक्त करने में विचार में ली जाने वाली बातों के लिए उपबंध किया गया है और इसमें यह अपेक्षा की गई है कि अप्राप्तवय का कल्याण उस विधि से संगत होना चाहिए जिसके अध्यधीन अप्राप्तवय है । पूर्व में, धारा 17 इस अधिनियम की धारा 19 के साथ पठित थी (जो कि नैसर्गिक संरक्षकता के अधिमानी अधिकार के संबंध में है) ।[159] धारा 19 में, स्वीय विधि (संशोधन) अधिनियम, 2010 द्वारा संशोधित किए जाने से पूर्व, (अप्राप्तवय लड़की के) पति को या (अन्य सभी मामलों में) पिता को अप्राप्तवय का संरक्षक बनने का अधिमानी अधिकार प्रस्थापित किया गया था, यदि उन दोनों में कोई भी संरक्षक नियुक्त किए जाने के लिए योग्य नहीं था । 2010 के अधिनियम द्वारा पिता के साथ-साथ माता को भी बालक के नैसर्गिक संरक्षक के रूप में सम्मिलित किया गया था और विधिक स्थिति में थोड़ा सा परिवर्तन कर दिया

---

[158]मुल्ला कृत्त हिन्दू लॉ, संपा. सत्यजीत ए. देसाई,21वां संस्करण, 2010, पृ.1258.70.

[159]भारतीय विधि आयोग, 83वीं रिपोर्ट, अप्रैल (1980),¶6.40, http://lawcommissionofindia.nic.in/51-100/Reports83.pdf पर उपलब्ध ।

गया था ।[160] तथापि, ऐसे मामलों में बालक का कल्याण अब भी विधि के अधीन सही अर्थों में सर्वोपरि विचारणीय बात नहीं थी ।

विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि कानून में किसी अनुकल्पी पठन की संभाव्यता को ठीक किया जाए और वह इस संदर्भ में विधि आयोग की 83वीं रिपोर्ट द्वारा की गई साधारण सिफारिशों की पुनः पुष्टि करता है । अतः, संरक्षक की नियुक्ति या घोषणा करने में अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि होना चाहिए और प्रत्येक अन्य बात इस विचारणा से गौण होनी चाहिए । तथापि, कल्याण का अवधारण करते समय न्यायालय उन विधियों को सम्यक् महत्व दे सकेगा जिनके अध्यधीन अप्राप्तवय हो सकता है । जैसा कि 83वीं रिपोर्ट में मतभिव्यक्ति की गई है, ऐसे संशोधन से आने वाली सभी समयों के लिए स्थिति तय हो जाएगी,[161] और इससे प्रथमतः कल्याण का निर्धारण किए बिना कोई संरक्षक नियुक्त करने की संभावना समाप्त हो जाएगी ।

2. **धारा 19:** इस धारा में कतिपय व्यक्तियों के नैसर्गिक संरक्षक समझे जाने संबंधी अधिमानी अधिकार के लिए उपबंध किया गया है । इसमें यह उपबंधित है कि यदि उस अप्राप्तवय के, जो विवाहिता नारी है और जिसका पति उसके शरीर का संरक्षक होने के आयोग्य नहीं है या यदि विवाहिता नारी से भिन्न किसी अप्राप्तवय का पिता या माता (जो जीवित हैं) इसी प्रकार संरक्षक होने के अयोग्य नहीं है तो न्यायालय संरक्षक नियुक्त न करे । आयोग यहां भी, कल्याण के सिद्धांत के महत्व के संबंध में अपनी 83वीं रिपोर्ट की पुनःपुष्टि करता है और यह सिफारिश करता है कि इस बात का अवधारण करते समय कि कोई व्यक्ति इन परिस्थितियों में संरक्षक होने के अयोग्य है अथवा नहीं, धारा 17 के अधीन अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात होगी ।

3. धारा 25: इस धारा में प्रतिपाल्य की गिरफ्तारी के लिए उपबंध किया गया है यदि प्रतिपाल्य अपने संरक्षक की अभिरक्षा को छोड़ देता है या उससे हटा दिया जाता है, यदि ऐसी गिरफ्तारी प्रतिपाल्य के लिए कल्याणकर है । विधि आयोग अपनी उपर्युक्त सिफारिशों के बारे में अपनी 83वीं रिपोर्ट से विभिन्न पहलुओं से सहमत है ।[162] सर्वप्रथम, किसी अप्राप्तवय की गिरफ्तारी

---

[160]स्वीय विधि(संशोधन) अधिनियम, 2010 (2010 का 30), अध्याय 2..

[161]भारतीय विधि आयोग, 83वीं रिपोर्ट, अप्रैल (1980),¶6.40, http://lawcommissionofindia.nic.in/51-100/Reports83.pdf पर उपलब्ध ।

[162]यथोक्त ¶7.18.

की संकल्पना प्राचीन है और आधुनिक सामाजिक विचारधारा प्रदर्शित करने के लिए इसमें संशोधन करने की आवश्यकता है । अतः, विधि आयोग एक प्रतिस्थापित धारा की सिफारिश करता है जिसमें 'गिरफ्तारी' के स्थान पर प्रतिपाल्य को उसके संरक्षक की अभिरक्षा में वापस करने की अपेक्षा की जा सकती है । पुनः, आयोग अप्राप्तवय के कल्याण को सर्वोपरि विचारणा के रूप में रखने की आवश्यकता को दोहराता है ।

दूसरे, विधि का वर्तमान पाठ इस बारे में अस्पष्ट है कि कोई ऐसा संरक्षक, जिसके पास अप्राप्तवय की अभिरक्षा कभी नहीं थी, इस धारा के अधीन अनुतोष का हकदार है अथवा नहीं । इसे स्पष्ट करने की आवश्यकता है और तदनुसार, विधि आयोग इस उपबंध की भाषा के संबंध में 83वीं रिपोर्ट[163] की उन सिफारिशों को दोहराता है जिनमें विनिर्दिष्ट रूप से यह कहा गया है कि यह उन मामलों में लागू होता है जहां बालक संरक्षक की अभिरक्षा में नहीं है यद्यपि पश्चात्वर्ती ऐसी अभिरक्षा का हकदार है ।

तीसरे, यह सिफारिश करता है कि न्यायालय को चौदह वर्ष या उससे अधिक आयु के बालक की बाबत इस धारा के अधीन कोई आदेश बालक की इच्छाओं को विचार में लिए बिना नहीं करना चाहिए ।[164] यह इस अधिनियम की धारा 17 के उपबंधों के अनुकूल है जिसमें न्यायालय को अप्राप्तवय के कथित अधिमान पर विचार करने के लिए अनुज्ञात किया गया है यदि अप्राप्तवय इतनी आयु का है कि वह बुद्धिमत्तापूर्ण अधिमान कर सकता है । ऐसी पृष्ठभूमि में जहां चौदह वर्ष की आयु से अधिक के अप्राप्तवय ने अपने संरक्षक की अभिरक्षा को छोड़ दिया है या उससे हटा दिया गया है, आयोग यह सिफारिश करता है कि न्यायालय को बालक की अधिमानता पर विचार करना चाहिए ।

4. नए अध्याय 2 क का अंतःस्थापन: यह अध्याय अभिरक्षा, बालक संभाल और मुलाकात संबंधी मुद्दों के संबंध में है, जिसके अंतर्गत अनेक विषय आते हैं जिनके संबंध में नीचे चर्चा की गई है ।

क. धारा 19क: अध्याय के उद्देश्य ।

इस धारा में न्यायालय के इस मार्गदर्शन के तौर पर इस अध्याय के मूल उद्देश्य अधिकथित किए गए हैं कि इस अध्याय में क्या प्राप्त करना

---

[163]भारतीय विधि आयोग, 83वीं रिपोर्ट, अप्रैल (1980),¶6.40, http://lawcommissionofindia.nic.in/51-100/Reports83.pdf पर उपलब्ध ।

[164]यथोक्त¶7.20.

ईप्सित है । किसी विवाह-विषयक विवाद मे बालक सबसे अधिक भेद्य व्यक्ति होते हैं और ऐसे विवादों के विधिक अवधारण के दौरान और उसके पश्चात् जो आघात वे झेलते हैं वह बहुत कठोर होता है । ऐसे मामलों में बालक प्रायः प्रणयम् बन जाते हैं और उनके माता-पिता उनका उपयोग अपने प्रयोजनों के लिए अपनी ऐसी सौदेबाजी मे करते हैं जिसमें ऐसी भावनात्मक, सामाजिक और मानसिक उथल-पुथल का विरले ही ध्यान रखा जाता है जो बालकों को स्वयं झेलनी पड़ती है । आयोग का यह विश्वास है कि ऐसे विधायी परिवर्तनों के माध्यम से, जो न्यायालय पर यह कर्तव्य अधिरोपित करेंगे कि वे उसमें अंतर्वलित पक्षकारों के व्यष्टिक हितों का ध्यान रखे बिना प्रत्येक परिस्थिति में बालक के कल्याण को कायम रखे, इस असंतुलित स्थिति से कुछ हद तक निपटा जा सकता है ।

अतः, इन उद्देश्यों में, विधि आयोग की इस संबंध में मूलभूत और अत्यंत महत्पूर्ण सिफारिश सन्निविष्ट है कि बालक का कल्याण अत्यधिक विचारणीय बात है । न्यायालय इस अध्याय के अधीन कोई आदेश करते समय इन उद्देश्यों को ध्यान में रखने के लिए बाध्य है और इसलिए उसे इन उद्देश्यों के प्रकाश में ऐसे किसी आदेश के, जो वह करता है, परिणामों का व्यापक रूप से निर्धारण करना होगा ।

इन उद्देश्यों में यह अपेक्षित है कि विभिन्न अन्य पहलुओं को सुनिश्चित करके बालक के कल्याण की पूर्ति की जाए, जैसे, बालक के परिवर्तनशील भावनात्मक, बौद्धिक और शारीरिक आवश्यकताओं को मानना; माता और पिता दोनों, समाज और भाई-बहनों के साथ अच्छे और निरन्तर संबंध बनाए रखना; बालक के विकास में भाग लेने संबंधी माता-पिता की पूर्ववर्ती और भावी योग्यता और प्रतिबद्धता को मानना; बालक को किसी भी प्रकार की हिंसा से संरक्षित रखना, आदि ।

ख. धारा 19ख: इस अध्याय की उपयोज्यता

अभिरक्षा संबंधी मुद्दों पर तीन स्वीय विधियों में कार्यवाही की जाती है, जो ये हैं, भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1869(धारा 41 और धारा 43), पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936(धारा 49) और हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (धारा 26) । ये धाराएं, साधारण रूप में न्यायालय को ऐसे अप्राप्तवय बालकों की, जिनके माता-पिता विवाह-विच्छेद या पृथक्करण के वाद में पक्षकार हैं, अभिरक्षा, भरणपोषण और शिक्षा के संबंध में डिक्री/आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती हैं ।

विधि आयोग द्वारा सिफारिश किया गया नया अध्याय 2क अभिरक्षा

संबंधी मामलों में विस्तृत विचारणा के लिए उपबंध करता है और वह इस संबंध में न्यायालय की उन शक्तियों के अतिरिक्त है जो तीन स्वीय विधियों में सूचीबद्ध हैं । इस नई धारा में यह स्पष्ट किया गया है कि इस नए अध्याय के उपबंध अभिरक्षा और बालक संभाल संबंधी सभी कार्यवाहियों को लागू होंगे जिसके अंतर्गत तीन विधियों के अंतर्गत आने वाली कार्यवाहियां भी आती हैं । स्वीय विधियों के इस प्रति-निर्देश का यह स्पष्ट करने के लिए कानून में उपबंध किया गया है कि आयोग की सिफारिशों का आशय लौकिक है और ये सभी व्यक्तियों को लागू होती हैं चाहे वे किसी भी स्वीय विधि द्वारा शासित होते हों ।

ग. धारा 19ग: परिभाषाएं ।

इस धारा में दो प्रमुख परिभाषाएं दी गई हैं, अर्थात्, संयुक्त अभिरक्षा और एकल अभिरक्षा । संयुक्त अभिरक्षा वह है जहां माता और पिता दोनों बालक की शारीरिक अभिरक्षा (ऐसे अनुपात में, जो न्यायालय बालक के कल्याण के लिए अवधारित करे) साझा करते हैं और बालक की देखरेख और नियंत्रण का उत्तरदायित्व और विनिश्चय करने संबंधी अपने प्राधिकार को भी समान रूप से साझा करते हैं । एकल अभिरक्षा वह स्थिति होती है जहां माता-पिता में से एक बालक की शारीरिक देखरेख और नियंत्रण को अपने पास रखता है । तथापि, ये अधिकार न्यायालय द्वारा दूसरे माता या पिता को मुलाकात के अधिकार प्रदान करने की शक्ति के अध्यधीन हो सकते हैं ।

संयुक्त अभिरक्षा का एक निश्चित पद के रूप में पुरःस्थापन, विधि में, न्यायालय द्वारा संयुक्त अभिरक्षा का आदेश जारी करने की संभावना को मान्यता देना है यदि वह बालक के कल्याण में हो । तथापि, संयुक्त अभिरक्षा की परिभाषा और उन सारवान उपबंधों का, जो उसके परिणामस्वरूप किए गए हैं, पठन उन उद्देश्यों के प्रकाश में किया जाना चाहिए, जो अध्याय के प्रारंभ में दिए गए हैं, जो यह सुनिश्चित करने की ईप्सा करते हैं कि अंततोगत्वा मंजूर की गई अभिरक्षा संबंधी व्यवस्था सदैव बालक के कल्याण की पूर्ति के अध्यधीन है ।

घ. धारा 19घ: अभिरक्षा प्रदान करना ।

इस धारा में न्यायालय को अभिरक्षा संबंधी विभिन्न किस्म के आदेश करने की शक्तियां दी गई हैं । तथापि, इसमें न्यायालय से यह भी अपेक्षा की गई है कि वह इस संबंध में अनुसूची में अंतर्विष्ट विस्तृत दिशानिर्देशों पर विचार करे । न्यायालय इस प्रकार किए गए आदेशों को उपांतरित करने की शक्ति प्रतिधारित करता है बशर्ते ऐसे उपांतरण बालक के कल्याण में ही रहें

और ऐसे उपांतरण के कारण अभिलिखित किए जाएं ।

ङ. धारा 19ङ: अतिरिक्त आदेश पारित करने की शक्ति ।

यह न्यायालय को प्रदान की गई एक अतिरिक्त शक्ति है जो इस अध्याय के अधीन बालक की अभिरक्षा से संबंधित किसा आदेश को प्रभावी बनाने या प्रवृत्त करने के लिए आवश्यक है ।

च. धारा 19च: मध्यस्थता ।

विवाह-विच्छेद की कार्यवाहियों से उद्भूत होने वाले अनेक विवादों (बालक अभिरक्षा, बालक संभाल, आदि) का समाधान मध्यस्थता के माध्यम से किया जा सकता है । इससे माता-पिता और बच्चों दोनों के लिए बेहतर परिणामों का संवर्धन होगा तथा अतिभाराक्रांत न्यायालय प्रणाली के दबाव में भी कमी आएगी । आयोग यह सिफारिश करता है कि अभिरक्षा संबंधी मामले के पक्षकारों को सीधे न्यायालय प्रणाली में जाने से पूर्व साधारणतया कार्यवाहियों को वास्तव में आरंभ होने से पूर्व या जब भी न्यायालय ऐसा आदेश करें, मध्यस्थता पर विचार करना चाहिए । न्यायालय प्रायः माता-पिता को न्यायालय से संबद्ध मध्यस्थता केन्द्र को निर्देशित करेगा । तथापि, यदि ऐसा कोई केन्द्र नहीं है तो न्यायालय किसी व्यष्टिक मध्यस्थ को नियुक्त कर सकेगा ।

वर्तमान में, कुटुम्ब न्यायालय विवादों के निपटान के लिए विवाह परामर्शियों की सहायता लेते हैं । परामर्शी अपने दृष्टिकोण की दृष्टि से मध्यस्थों से भिन्न होते हैं । परामर्श में प्रायः प्रत्येक पक्षकार के व्यवहार संबंधी मुद्दों की पहचान करने की आवश्यकता होती है और इसमें मानसिक स्वास्थ्य, मनोविज्ञान और समाजशास्त्र जैसे क्षेत्रों में प्रशिक्षित वृत्तिकों को अंतर्वलित करना होता है इसके विपरीत मध्यस्थता में झगड़े संबंधी व्यवहार की पहचान करने की आवश्यकता होती है और इसमें ऐसे वृत्तिकों को अंतर्वलित किया जाता है जो विवाद का समाधान करने में प्रशिक्षित हैं ।[165] अतः, आयोग यह सिफारिश करता है कि पक्षकारों को किसी प्रशिक्षित मध्यस्थ के साथ मध्यस्थता में भाग लेने का अवसर दिया जाना चाहिए । मध्यस्थों की समुचित पृष्ठभूमि होनी चाहिए और उसके पास प्रशिक्षण होना चाहिए, जिसके अंतर्गत कौटुम्बिक विवाद भी शामिल हैं । इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालयों, जिला

[165] मेरिटल मेडिएशन स्टाफ, विवाह-विषयक मध्यस्थता और विवाह-विषयक परामर्श के बीच क्या अंतर है?, 22 फरवरी, 2013, http://www.maritalmedication.com/faqs/what-is-the-difference-between-marital-mediation-and-marital-counseling-2 पर उपलब्ध है (अंतिम बार 22 अप्रैल, 2015 को देखा गया) ।

न्यायालयों और कुटुम्ब न्यायालयों को न्यायालयों से संबद्ध मध्यस्थ केन्द्रों और व्यष्टिक मध्यस्थों की सूची रखनी चाहिए । संबंधित उच्च न्यायलयों द्वारा संबंधित राज्य सरकारों से परामर्श करके तैयार की गई स्कीम के अनुसार इनकी पहचान की जाएगी और इन्हें पारिश्रमिक का संदाय किया जाएगा ।

जैसा कि विधान में बारंबार जोर दिया गया है, न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि अभिरक्षा संबंधी अंतिम आदेश बालक के कल्याण के लिए है । इस प्रयोजन के लिए, आयोग यह सिफारिश करता है कि न्यायालय के पास विभिन्न संबद्ध मुद्दों का निर्धारण करने के लिए (उदाहरणार्थ, बालक की अधिमानता, माता-पिता का प्रभाव और उनसे संबंध, आदि) बालक का स्वतंत्र मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन प्राप्त करने की शक्ति होनी चाहिए । इसके अलावा, जैसा कि मध्यस्थता के मामले में होता है, वृत्तिक सहायता की आवश्यकता हो सकती है, क्योंकि न तो न्यायालय और न ही मध्यस्थ बालक की मानसिकता को समझने के योग्य हो सकता है ।

यह सुनिश्चित करने के अंतिम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए कि बालक के कल्याण की पूर्ति हो गई है, समयबद्ध समाधान भी एक प्रमुख कारक होता है । उच्चतम न्यायालय ने यह माना है कि कुटुम्ब न्यायालयों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि संपूर्ण मध्यस्थता प्रक्रिया को पूरा करने के लिए युक्तियुक्त समय सीमा विहित की जाए जिससे कि कौटुम्बिक विवादों के समाधान में और अधिक विलंब न हो सके ।[166] आयोग यह सिफारिश करता है कि इस धारा के अधीन की जाने वाली कोई भी मध्यस्थता समयबद्ध होनी चाहिए और वह इस प्रकार आदेश किए जाने के साठ दिनों के भीतर समाप्त हो जानी चाहिए । ऐसी अपेक्षा के अभाव में, इस बात का जोखिम होता है कि मध्यस्थता अनिश्चितकाल तक चल सकती है और प्रश्नगत बालक पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है । तथापि, न्यायालय, जहां आवश्यक हो, इस अवधि को बढ़ा सकता है ।

छ. धारा 19छः बालक संभाल

भारत में स्वीय विधियां, संहिताबद्ध हिन्दू विधि[167] और पारसी विधि[168] और भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम[169] में बालकों की अभिरक्षा की

---

[166] बलजिन्दर कौर ब. हरदीप तिंह, ए.आई.आर. 1998 एस. सी. 764.

[167] हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) §26.

[168] पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936(1936 का 3) §49.

[169] भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1869(1869 का 4) §41 और §43.

संकल्पना के माध्यम से कुछ सीमा तक बालक संभाल की संकल्पना और विचार के संबंध में हैं । तथापि, इन उपबंधों में वे कारण नहीं दिए गए हैं, जिनके लिए ऐसी बालक संभाल की आवश्यकता है । हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 में बालकों के भरणपोषण के लिए उपबंध है[170] किन्तु इसमें मात्र भरणपोषण की बाध्यता पिता[171] तथा माता[172] पर डाली गई है । यहां भरणपोषण से खाने, कपड़े, आवास, शिक्षा और चिकित्सीय परिचर्या और उपचार की व्यवस्था करना अभिप्रेत है ।[173] भरणपोषण की यह परिभाषा साधारण तौर पर शब्दाभिव्यक्त की गई है जिससे कि वह उन सभी व्यक्तियों को लागू हो सके जो 1956 के अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के अधीन भरणपोषण का दावा करने के हकदार हैं ।[174] विधि आयोग का यह विश्वास है कि अभिरक्षा के मामलों में बालक संभाल के अंतर्गत 1956 के अधिनियम द्वारा की गई भरणपोषण की संकल्पना से बहुत अधिक समाविष्ट है । तदनुसार, यह न्यायालय को बालकों के भरणपोषण के लिए विनिर्दिष्ट रूप से आदेश पारित करने के लिए सशक्त करता है । इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि ऐसे आदेश में ऐसी रकम नियत करना अंतर्वलित होगा जो बालक के जीवन-निर्वाह के व्ययों की पूर्ति के लिए, जिसके अंतर्गत खाना, कपड़ा, आश्रय, स्वास्थ्य देखरेख और शिक्षा भी है, "युक्तियुक्त या आवश्यक" है ।

तथापि, "युक्तियुक्त" और "आवश्यक" अभिव्यक्तियों का अर्थान्वयन अस्पष्ट रूप में किया जा सकता है और जब बालक संभाल के लिए रकम नियत की जानी हो तब उसका दुरुपयोग किया जा सकता है या उसका गलत निर्वचन किया जा सकता है । अतः, न्यायालय ऐसे कतिपय कारकों की सिफारिश करके इन अभिव्यक्तियों को विशेषित करता है, जो न्यायालयों को तब ध्यान में रखनी चाहिए जब बालक संभाल की गणना की जा रही हो । इनके अंतर्गत माता-पिता के वित्तीय संसाधन, बालक के रहन-सहन का स्तर,[175] बालक की शारीरिक और मानसिक स्थिति, उसकी शैक्षणिक और स्वास्थ्य देखरेख संबंधी आवश्यकताएं या ऐसा कोई अन्य कारक, जो न्यायालय, बालक के कल्याण के लिए उचित समझे ।

आयोग, इस साधारण सिद्धांत का अनुसरण करते हुए कि 18 वर्ष की

---

[170] हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 (1956 का 78) §20.

[171] कृष्णाकुमारी व. वरलक्ष्मी, ए. आई. आर. 1976 आन्ध्र प्रदेश 365.

[172] मुल्ला कृत हिन्दू लॉ, संपा. सत्यजीत देसाई, 21वां संस्करण 2010, पृ. 1378.

[173] हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 (1956 का 78) §3(ख).

[174] मुल्ला कृत हिन्दू लॉ, संपा. सत्यजीत देसाई, 21वां संस्करण 2010, पृ. 1294.

[175] सयाली पाठक ब. वसंत पाठक 110(2004) डी. एल. टी. 637.

आयु पूरी कर लेने पर प्राप्तवयता आती है, यह सिफारिश करता है कि बालक संभाल प्राप्तवयता की इस आयु तक जारी रहनी चाहिए । ऐसे मामले हैं, जहां न्यायालय ने भरणपोषण की आयु अठारह वर्ष से बढ़ाकर इक्कीस वर्ष करने की सलाह दी है और आयोग से उसकी सलाह मांगी है ।[176] न्यायालय का यह मत है कि न्यायालय के पास बालक के 18 वर्ष की आयु पूरी करने के पश्चात् भी बालक संभाल को जारी रखने की शक्ति होनी चाहिए और जहां कहीं भी समुचित हो, यह अवधि तब तक बढ़ाई जा सके जब तक बालक 25 वर्ष की आयु तक पहुंचता है न कि उसके पश्चात् ।

आयोग यह भी मानता है कि मानसिक या शारीरिक निःशक्तता वाले बालकों के साथ विशेष व्यवहार किया जाए ।[177] हिन्दू दत्तक और भरणपोषण अधिनियम, 1956 निशःक्तता वाले व्यक्तियों को लागू होता है किन्तु ये फायदे अठारह वर्ष की आयु पर समाप्त हो जाते हैं । आयोग यह सिफारिश करता है कि विधि के उपबंध में सुधार किया जाए और मानसिक या शारीरिक निःशक्तता वाले बालक की दशा में ऐसे समय से परे, जब भी बालक 25 वर्ष की आयु तक पहुंचता है, बालक संभाल के लिए उपबंध किया जाए ।

न्यायालय यह सिफारिश करता है कि न्यायालय को यह सुनिश्चित करने के लिए माता-पिता के जीवनकाल के पश्चात् भी बालक का कल्याण प्रमुख रहे, ऐसे माता या पिता की संपदा पर, जिसकी मृत्यु बालक संभाल के लिए आदेश पारित रहने के दौरान या उसके पश्चात् हो जाती है, दायित्व संबंधी आदेश करने की शक्ति होनी चाहिए ।

ज. अनुसूची: दिशानिर्देश

आयोग, विधेयक की अनुसूची में, विधि के मुख्य भाग के साथ रखे जाने वाले विभिन्न दिशानिर्देशों की भी सिफारिश करता है । इन दिशानिर्देशों में निम्नलिखित मुद्दों पर चर्चा की गई है: संयुक्त अभिरक्षा मंजूर करते समय, बालक की अधिमानता, बालक के अभिलेखों तक पहुंच, पालन पोषण योजना, पितामह-पितामही और मातामह-मातामही पालनपोषण समय,

---

[176] टाइम्स आफ इंडिया, रेज़ एज फार चाइल्ड मेंटेंनेस टू 21: न्यायालय अगस्त 12(2011), http://timesofindia.indiatimes.com/city/delhi/Raise-age-for-child-maintenance-to-21-Court/articleshow/9573821.cms पर उपलब्ध (अंतिम बार तारीख 23 प्राल, 2015 को देखा गया)।

[177] किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000(2000 का 56), §2(घ).

मध्यस्थता, मुलाकात, विनिश्चय करने और स्थान-परिवर्तन का अवधारण करते समय विचार में रखे जाने वाले कारक ।

हस्ता/-
(न्यायमूर्ति ए. पी. शाह)
अध्यक्ष

हस्ता/-	हस्ता/-	हस्ता/-
(न्यायमूर्ति एस. एन. कपूर)	[प्रोफेसर(डा.) मूल चन्द शर्मा]	(न्यायमूर्ति ऊषा मेहरा)
सदस्य	सदस्य	सदस्य

हस्ता/-	हस्ता/-
(पी. के. मल्होत्रा)	(डा. संजय सिंह)
पदेन सदस्य	पदेन सदस्य

हस्ता/-
(डा. जी. नारायण राजू)
सदस्य-सचिव

हस्ता/-	हस्ता/-
(आर. वेंकटरमणी)	[प्रोफेसर(डा.) योगेश त्यागी]
सदस्य(अंशकालिक)	सदस्य(अंशकालिक)

उपाबंध-1

हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता (संशोधन) विधेयक, 2015

हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 का और संशोधन करने के लिए विधेयक

भारत गणराज्य के छियासठवें वर्ष में निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :--

संक्षिप्त नाम।

1. इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता (संशोधन) अधिनियम, 2015 है ।

धारा 6 का संशोधन ।

2. हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 (जिसे इसमें इसके पश्चात् मूल अधिनियम कहा गया है) की धारा 6 में,--

(1) खंड (क) के स्थान पर, निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात् :--

"(क) किसी लड़के या अविवाहिता लड़की दशा में— माता और पिता ;";

(2) स्पष्टीकरण को स्पष्टीकरण 1 के रूप में संख्यांकित किया जाएगा और इस प्रकार संख्यांकित स्पष्टीकरण के पश्चात्, निम्नलिखित स्पष्टीकरण अंतःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :--

"स्पष्टीकरण 2 —खंड (क) के प्रयोजनार्थ, जब तक न्यायालय द्वारा संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 के अध्याय 2क के अधीन संयुक्त अभिरक्षा न दी जाए, तब तक ऐसे अप्राप्तवय की, जिसने पांच वर्ष की आयु पूरी न कर ली हो, अभिरक्षा मामूली

तौर पर माता के हाथ में होगी ।"।

धारा 7 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन ।

3. मूल अधिनियम की धारा 7 के स्थान पर, निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात् :--

दत्तक पुत्र की नैसर्गिक संरक्षकता ।

"7. ऐसे दत्तक पुत्र की, जो अप्राप्तवय हो, नैसर्गिक संरक्षकता दत्तकग्रहण पर दत्तक पुत्र माता और पिता को संक्रांत हो जाती है।"।

उपाबंध-2

संरक्षक और प्रतिपाल्य (संशोधन) विधेयक, 2015

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890
का और संशोधन
करने के लिए
विधेयक

भारत गणराज्य के छियासठवें वर्ष में निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :--

संक्षिप्त नाम ।

1. इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम संरक्षक और प्रतिपाल्य (संशोधन) अधिनियम, 2015 है ।

धारा 17 का संशोधन ।

2. संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (जिसे इसमें इसके पश्चात् मूल अधिनियम कहा गया है) की धारा 17 में,--

(i) उपधारा (1) के स्थान पर, निम्नलिखित उपधारा रखी जाएगी, अर्थात् :--

"(1) किसी अप्राप्तवय का संरक्षक नियुक्त या घोषित करने में अप्राप्तवय का कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात होगी ।";

(ii) उपधारा (1) के पश्चात्, निम्नलिखित उपधारा अंतःस्थापित की जाएगी, अर्थात् :--

"(1क) उपधारा (1) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, न्यायालय उस अप्राप्तवय का संरक्षक नियुक्त या घोषित करने में, उस विधि का, जिसके आप्राप्तवय अध्यधीन है, सम्यक् ध्यान रखेगा ।"।

धारा 19 का

3. मूल अधिनियम की धारा 19 के स्थान पर, निम्नलिखित

संशोधन ।

परन्तुक अंतःस्थापित किया जाएगा, अर्थात् :--

"परन्तु इस बात का अवधारण करने में कि क्या कोई व्यक्ति खंड (क) या खंड (ख) के अधीन संरक्षक होने के अयोग्य है, धारा 17 की उपधारा (1) के अधीन यथा अपेक्षित अप्राप्तवय के कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात होगी ।"।

धारा 25 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन ।

4. मूल अधिनियम की धारा 25 के स्थान पर, निम्नलिखित धारा रखी जाएगी, अर्थात् :--

प्रतिपाल्य की अभिरक्षा की कार्यवाहियां ।

"25(1). धारा 19 में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, यदि प्रतिपाल्य अपने शरीर के संरक्षक की अभिरक्षा को छोड़ देता है या उससे हटा दिया जाता है या उस अभिरक्षक की जो, ऐसी अभिरक्षा का हकदार है, अभिरक्षा में नहीं है, तो यदि न्यायालय इस राय का है कि प्रतिपाल्य के लिए यह कल्याणकर होगा कि वह संरक्षक की अभिरक्षा में लौट आए या उसकी अभिरक्षा में रखा जाए तो वह, यथास्थिति, उसके संरक्षक की अभिरक्षा में लौट आने या रखे जाने का आदेश कर सकेगा ।

(2) न्यायालय, आदेश का प्रवर्तन कराने के प्रयोजन के लिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 97 द्वारा प्रथम वर्ग" मजिस्ट्रेट को प्रदत्त शक्ति का प्रयोग कर सकेगा।

(3) ऐसे व्यक्ति के पास, जो उसका संरक्षक नहीं है, प्रतिपाल्य का अपने संरक्षक की इच्छा के विरुद्ध निवास, स्वत: संरक्षकता का पर्यवसान नहीं कर देता है।

(4) इस धारा के अधीन आदेश करने में, न्यायालय प्रतिपाल्य के कल्याण का सर्वोपरि विचारणीय बात के रूप में ध्यान रखेगा।

(5) न्यायालय, चौदह वर्ष या उससे अधिक आयु के बालक के संबंध में, बालक के अधिमान पर विचार किए बिना, इस धारा के अधीन कोई आदेश नहीं करेगा।''।

नए अध्याय का अंत:स्थापन।

5. मूल अधिनियम में, अध्याय 2 के पश्चात्, निम्नलिखित अध्याय 2क अंत:स्थापित किया जाएगा, अर्थात् :–

''अध्याय 2क : अभिरक्षा, बालक संभाल और मुलाकात की व्यवस्था

19क. इस अध्याय के उद्देश्य :

इस अध्याय के उद्देश्य यह सुनिश्चित करने के हैं कि बालक का कल्याण–

(क) यह सुनिश्चित करके कि बालक को माता-पिता, दोनों, का, जिनका कि उसके जीवन में अर्थपूर्ण लगाव है, उस अधिकतम सीमा तक फायदा मिले जो बालक के कल्याण से संगत हो;

(ख) यह सुनिश्चित करना कि बालक को ऐसा पर्याप्त और उचित पालन-पोषण मिले जिससे कि वह अपने पूर्ण सामर्थ्य को प्राप्त कर सके;

(ग) यह सुनिश्चित करना कि माता-पिता बालक की देखरेख, कल्याण और विकास संबंधी अपने कर्तव्यों को पूरा करें और अपने उत्तरदायित्वों को निभाएं;

(घ) बालक की परिवर्तनशील भावनात्मक, बौद्धिक ओर भौतिक जरूरतों के प्रति सम्यक् ध्यान देना;

(ङ) माता-पिता, दोनों, को बालक के साथ निकट के और सतत् संबंध बनाए रखने के लिए और बालक पर प्रभाव डालने वाले मामलों में सहयोग करने तथा उससे संबंधित विवादों का समाधान करने के लिए प्रोत्साहित करना;

(च) इस बात को स्वीकार करना कि बालक को इस बात पर ध्यान दिए बिना कि माता-पिता विवाहित हैं, अलग हो गए हैं या अविवाहित हैं, माता-पिता, दोनों के बारे में जानने का तथा उनके द्वारा देखरेख किए जाने का अधिकार है; और

(छ) बालक को शारीरिक या मनोवैज्ञानिक अपहानि से या किसी दुर्व्यवहार, उपेक्षा या कौटुंबिक हिंसा का शिकार होने से या अरक्षित छोड़ दिए जाने से संरक्षा करना।

19ख. इस अध्याय का लागू होना :

इस अध्याय के उपबंध उन सभी कार्यवाहियों को लागू होंगे जिनमें अभिरक्षा और बालक संभाल के संबंध में माता-पिता शामिल हैं, इनमें वे सब कार्यवाहियां हैं जो भारतीय विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1869, पारसी विवाह और विवाह-विच्छेद अधिनियम, 1936 और हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अधीन उद्भुत होती हैं।

19ग. परिभाषाएं :

इस अध्याय के प्रयोजन के लिए–

(क)''संयुक्त अभिरक्षा'', जहां कि माता-पिता दोनों, –

i. बालक की उस शारीरिक अभिरक्षा को साझा करते हैं, जिसको कि समान रूप से या ऐसे अनुपात में, जो न्यायालय द्वारा बालक के कल्याण के लिए अवधारित किया जाए, साझा किया जा सकता है; और

ii. बालक की देखरेख और नियंत्रण के लिए संयुक्त उत्तरदायित्व और संयुक्त प्राधिकार बालक के संबंध में विनिश्चित करने के लिए समान रूप से साझा करते हैं; और

(ख) ''एकल अभिरक्षा'' वह है जहां कि माता अथवा पिता में से एक के पास बालक की शारीरिक अभिरक्षा और उसकी देखरेख और नियंत्रण का उत्तरदायित्व है, किन्तु यह न्यायालय की दूसरे जनक अर्थात् माता की दशा में पिता अथवा पिता की दशा में माता को बालक से मुलाकात करने के अधिकार देने की शक्ति के अध्यधीन होगा।

19घ. अभिरक्षा का दिया जाना :

(1) ऐसी किसी कार्यवाही में, जिसको यह अध्याय लागू होता है, न्यायालय संयुक्त अभिरक्षा अथवा एकल अभिरक्षा का, जो बालक के कल्याण से संगत हो, आदेश कर सकेगा।

(2) इस बात का अवधारण करने में कि क्या इस धारा के अधीन आदेश बालक के लिए कल्याणकर होगा, न्यायालय अनुसूची में विनिर्दिष्ट मार्गदर्शक सिद्धांतों का ध्यान रखेगा।

(3) इस बात के अध्यधीन कि बालक का कल्याण सर्वोपरि विचारणीय बात है, न्यायालय इस धारा के अधीन के आदेश को उपांतरित कर सकेगा और वह ऐसा करने के अपने कारण अभिलिखित करेगा।

19ङ. अतिरिक्त आदेश पारित करने की शक्ति :

न्यायालय को बालक की अभिरक्षा से संबंधित किसी आदेश को प्रभावी करने और उसे प्रवर्तित कराने के लिए ऐसे कोई अतिरिक्त और आनुषंगिक आदेश पारित करने की शक्ति होगी।

19च. मध्यस्थता :

(1) न्यायालय इस अध्याय के अधीन कार्यवाहियों के प्रारंभ पर या उनके दौरान किसी प्रक्रम पर साधारणतया माता-पिता को न्यायालय से जुड़े मध्यस्थता केन्द्र में निर्दिष्ट करेगा या उसके न होने की दशा में ऐसे व्यक्ति को निर्दिष्ट करेगा जिसे न्यायालय मध्यस्थ के रूप में नियुक्त करे।

(2) ऐसे मध्यस्थ के पास, जिसको उपधारा (1) के अधीन माता-पिता निर्दिष्ट किए जाते हैं, मध्यस्थता में सुसंगत वृत्तिक अर्हताएं और प्रशिक्षण तथा कौटुम्बिक विवादों से संबंधित मामलों में मध्यस्थता करने में पर्याप्त कौशल और अनुभव होना चाहिए।

(3) इस धारा के प्रयोजन के लिए, प्रत्येक उच्च न्यायालय और जिला न्यायालय तथा कुटुंब न्यायालय न्यायालय से जुड़े मध्यस्थता केन्द्रों और व्यष्टिक मध्यस्थों की सूची बनाए रखेगा।

(4) न्यायालय से जुड़े मध्यस्थता केन्द्रों अथवा व्यष्टिक मध्यस्थों की, संबंधित उच्च न्यायाल द्वारा, संबंधित राज्य सरकारों से परामर्श करके, इस प्रयोजन के लिए तैयार की गई स्कीम के अनुसार पहचान की जाएगी और पारिश्रमिक संदत्त किया जाएगा।

(5) इस धारा के अधीन मध्यस्थता का कोई आदेश करने अथवा उसे करने के प्रयोजन के लिए, न्यायालय और नियुक्त किया

गया मध्यस्थ अनुसूची में विनिर्दिष्ट मार्गदर्शक सिद्धांतों का ध्यान रखेगा।

(6) न्यायालय, जहां वह उचित या आवश्यक समझे, बालक की मनोदशा का स्वतंत्र मूल्यांकन करने के लिए प्रशिक्षित और अनुभवी वृत्तिक से सहायता लेगा।

(7) न्यायालय द्वारा इस धारा के अधीन जिस मध्यस्थता का आदेश किया गया है, उस मध्यस्थता की कार्यवाही साधारणतया ऐसे आदेश की तारीख से साठ दिन के अपश्चात् जहां तक कि न्यायालय द्वारा उस अवधि को, जहां आवश्यक से, बढ़ाया न जाए, पूर्व की जानी चाहिए।

19छ. बालक संभाल :

(1) न्यायालय बालकों के भरण-पोषण के लिए समुचित आदेश पारित करेगा और एक ऐसी रकम नियत करेगा जो बालक के जीवन-निर्वाह के, जिनके अंतर्गत भोजन, कपड़े, आश्रय स्थल, स्वास्थ्य देखरेख और शिक्षा भी है, खर्चों को पूरा करने के लिए युक्तियुक्त या आवश्यक हो।

(2) न्यायालय, युक्तियुक्तता अथवा आवश्यकता का अवधारण करने के प्रयोजन के लिए, निम्नलिखित कारकों का ध्यान रखेगा, अर्थात् :–

(क)माता-पिता में से प्रत्येक के वित्तीय साधन;

(ख) रहन-सहन का स्तर जो कि न्यायालय का उस दशा में होता जब विवाह बना रहता;

(ग) बालक की शारीरिक और भावनात्मक स्थिति;

(घ) बालक की विशिष्ट शैक्षिक और देखरेख संबंधी जरूरतें; और

(ङ) कोई अन्य ऐसे कारक जो न्यायालय ठीक समझे।

(3) इस धारा के अधीन न्यायालय का आदेश बालक के अठारह वर्ष की आयु पूरी करने तक बना रहना चाहिए।

(4) उपधारा (1), उपधारा (2) और उपधारा (3) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, न्यायालय ऐसे अतिरिक्त आदेश कर सकेगा जो वह ठीक समझे, जिनमें निम्नलिखित भी हैं :–

(क)उपधारा (1) के अधीन जो राशि अवधारित की गई है, उससे अधिक राशि का संदाय करने की अपेक्षा करना;

(ख) उपधारा (3) के अधीन यथा उपबंधित अवधि से अधिक अवधि तक आदेश के बने रहने की अपेक्षा करना, किन्तु ऐसा आदेश किसी भी दशा में बालक के पच्चीस वर्ष की आयु पूरी करने के बाद के किसी समय तक नहीं बना रहेगा;

(ग)उपधारा (3) के अधीन किसी आदेश के, बालक के मानसिक या शारीरिक अक्षमता की दशा में, उसके पच्चीस वर्ष की आयु पूरी करने के बाद के समय तक बने रहने की अपेक्षा करना;

(घ)इस धारा के अधीन की कार्यवाहियों के दौरान या उनके पूरा होने के पश्चात् माता अथवा पिता में से किसी की मृत्यु की दशा में उसकी सम्पदा को न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अधीन की बाध्यताओं के लिए दायी बनाना।"।

6. मूल अधिनियम में, निम्नलिखित अनुसूची अंत में अंत:स्थापित की जाएगी, अर्थात् :–

"अनुसूची

अभिरक्षा, बालक संभाल और बालक से मुलाकात करने (मिलने) संबंधी मार्गदर्शक सिद्धांत

I. संयुक्त अभिरक्षा मंजूर करने के लिए विचारणीय कारक–

1. अध्याय 2क के अधीन संयुक्त अभिरक्षा का आदेश करने में न्यायालय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखेगा, अर्थात् :-

क. क्या माता-पिता सहयोग करने में और साधारणतया बालक के कल्याण पर प्रभाव डालने संबंधी महत्वपूर्ण विनिश्चयों से सहमत होने में समर् होंगे;

ख. माता-पिता में से प्रत्येक, बालक तथा माता की दशा में पिता अथवा पिता की दशा में माता के बीच निकट के और सतत् संबंध सुकर बनाने और उसके लिए प्रोत्साहित करने में इच्छुक और समर्थ है;

ग. क्या माता-पिता संयुक्त रूप से ऐसी दिन-प्रतिदिन की देखरेख योजना बनाने और उसे क्रियान्वित करने में, जो स्थायित्व को प्रोत्साहित करती है, समर्थ हैं;

घ. बालक और माता-पिता की परिपक्वता, जीवन शैली और पृष्ठभूमि (जिसके अंतर्गत संस्कृति और परम्पराएं भी हैं) और ऐसी कोई अन्य विशिष्टताएं जो न्यायालय सुसंगत समझता है;

ङ. वह सीमा, जिस तक माता-पिता में से प्रत्येक ने माता अथवा पिता के रूप में अपने उत्तरदायित्वों को पूरा किया है या पूरा करने में असफल रहा है या रही है;

च. वह सीमा, जिस तक माता-पिता एक-साथ कार्य करने के युक्तियुक्त मार्ग ढूंढने में समर्थ हैं अथवा असमर्थ है;

छ. वह सीमा, जिस तक अधिक आय अर्जित करने वाला पिता या माता प्रत्येक के पैतृक घर में जो रहन-सहन है, उस जैसे रहन-सहन को बनाने में सहायता देने का/की इच्छुक है;

ज. बालक के माता-पिता में से प्रत्येक के साथ, सहोदर भाई या बहन के साथ और ऐसे अन्य व्यक्तियों के साथ, जो बालक के कल्याण पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं, मौजूदा संबंध;

झ. बालक के दूसरी महत्वपूर्ण नातेदारियों पर, जिनके अंतर्गत सहोदर भाई या बहनें, अभिजात और विस्तारित कुटुंब के सदस्य भी हैं किन्तु उन तक सीमित नहीं है, सम्यक् ध्यान देते हुए, बालक की जरूरतें;

ञ. कोई कौटुम्बिक हिंसा, जिसमें बालक या बालक के कुटुंब के किसी सदस्य को शामिल किया गया हो;

ट. क्या बालक समझदारीपूर्ण अधिमान बनाने में समर्थ है; और

ठ. ऐसा कोई अन्य तथ्य या परिस्थिति जिसे न्यायालय सुसंगत समझे।

(2) न्यायालय बालक के कल्याण तथा माता-पिता में से प्रत्येक की आप का वार्षिक पुनर्विलोकन कराने तथा उसे न्यायालय के समक्ष फाइल करने के लिए माता-पिता को निर्देश देगा।

II. बालक के अधिमान का अवधारण

(1) इस अधिनियम के अधीन किसी प्रयोजन के लिए बालक के अधिमान का अवधारण करने में, न्यायालय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखेगा, अर्थात् :-

क. क्या बालक ऐसी परिपक्व आयु का है जो कि समझदारीपूर्ण अधिमान बना सके :

ख. वह सीमा जिस तक बालक न्यायालय की कार्यवाहियों के आस-पास की परिस्थितियों को समझ सकता है;

ग. क्या बालक का कोई समझदारीपूर्ण अधिमान अभिव्यक्त करने का कोई पूर्ववृत्त है;

घ. क्या बालक द्वारा इस प्रकार अभिव्यक्त कोई अधिमान इस तथ्य पर आधारित था कि बालक ने हाल ही में माता अथवा पिता में से किसी के साथ नियत से अधिक समय बिताया है; और

ङ. क्या बालक उस अधिमान के, जो उसने अभिव्यक्त किया है, परिणामों को समझता है।

(2) बालक से भेंटवार्ता करने में, न्यायालय, यदि वह परिस्थितिवश ठीक समझता है :-

क. इस बात का विनिश्चय कर सकता है कि उस समय, जब न्यायालय बालक से भेंटवार्ता करेगा, कौन उपस्थित होगा और यदि माता-पिता की या उनके विधिक प्रतिनिधियों की अनुपस्थिति में, आवश्यक हो तो अकेले बालक से बात कर सकेगा; या

ख. बालक मनोचिकित्सक, मध्यस्थ या न्यायालय द्वारा पहचान किए गए किसी अन्य विनिर्दिष्ट व्यक्ति की उपस्थिति के लिए अनुरोध कर सकेगा।

(3) न्यायालय बालक के साथ भेंटवार्ता का अभिलेख बनाएगा और ऐसे अभिलेख को, यदि न्यायालय यह अवधारित करता है कि उसे गोपनीय रखना बालक के लिए कल्याणकर है, तो उसे गोपनीय बनाए रख सकेगा।

(4) न्यायालय या कोई अन्य व्यक्ति, किसी भी परिस्थिति में, बालक से किसी विषय के संबंध में अपने विचार व्यक्त करने की अपेक्षा नहीं करेगा अथवा उसे बाध्य नहीं करेगा।

III. बालक के अभिलेखों तक पहुंच

(1) जब तक न्यायालय के आदेश या विधि के किसी अन्य उपबंध द्वारा प्रतिबंधित न किया जाए, माता-पिता में से किसी को भी, इस बात पर ध्यान दिए बिना कि ऐसे पिता अथवा माता के पास बालक की अभिरक्षा है या नहीं, अपने अप्राप्तवय बालक के बारे में किसी सूचना तक, जिसके अंतर्गत चिकित्सा, दंत और विद्यालय संबंधी अभिलेख भी हैं, पहुंच बनाने से वंचित नहीं किया जाएगा।

(2) न्यायालय, आपवादिक परिस्थितियों में, सुने जाने का अवसर दिए जाने के पश्चात्, यह आदेश कर सकेगा कि माता अथवा पिता से ऐसी विनिर्दिष्ट सूचना विधारित रखी जाए।

(3) चिकित्सीय अभिलेखों की दशा में, यदि न्यायालय ठीक समझता है तो वह माता अथवा पिता की ऐसी पहुंच बनाने से इंकार कर सकेगा, यदि बालक का उपचार करने वाला चिकित्सक या बाल मनोचिकित्सक इस बात का लिखित कथन करता है कि ऐसी किसी पहुंच से, जिसकी माता अथवा पिता अनुरोध कर रही/रहा है, बालक अथवा किसी अन्य व्यक्ति को अत्यधिक अपहानि कारित होगी।

IV. पितामह-पितामही, मातामह-मातामही द्वारा पालन पोषण का समय बालक के अभिलेखों तक पहुंच

(1) किसी बालक का पितामह या पितामही या मातामह या मातामही न्यायालय को निम्नलिखित में से एक या अधिक परिस्थितियों में पितामह-पितामही, मातामह-मातामही द्वारा पालन पोषण के समय के बारे में आदेश के लिए आवेदन कर सकेगा, अर्थात् :-

क. बालक के माता-पिता का विवाह-विच्छेद हो गया है या वे अलग हो गए हैं या न्यायालय के समक्ष विवाह-विच्छेद या पृथक्करण की कार्यवाहियां लंबित हैं; या

ख. बालक की माता अथवा पिता, जो मातामह-मातामही या पितामह-पितामही। की पुत्री का पुत्र है, की मृत्यु हो गई है; या

ग. पितामह या पितामही या मातामह या मातामही ने, पूर्व में, बालक के लिए अभिरक्षा संबंधी स्थापित वातावरण प्रदान किया था, चाहे पितामह या पितामही या मातामह या मातामही को न्यायालय के आदेश के अधीन अभिरक्षा दी गई हो अथवा नहीं;

(2) पितामह-पितामही या मातामह-मातामही द्वारा पालन-पोषण के संबंध में आदेश माता-पिता, दोनों, को सम्यक् सूचना देने और सुनवाई का अवसर दिए जाने के पश्चात् ही जारी किया जा सकेगा।

(3) पितामह-पितामही या मातामह-मातामही द्वारा पालन-पोषण करने के संबंध में आदेश जारी करने के पूर्व, न्यायालय द्वारा इस बात का अवधारण करेगा कि क्या ऐसा आदेश बालक के कल्याण के लिए अपेक्षित है।

(4) इस भाग के अधीन बालक के कल्याण का अवधारण करने में, न्यायालय निम्नलिखित पर विचार करेगा, अर्थात् :-

क. पितामह-पितामही या मातामह-मातामही और बालक के बीच मौजूदा प्यार, स्नेह ओर अन्य भावनात्मक संबंध;

ख. पितामह-पितामही या मातामह-मातामही का मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य;

ग. बालक का समझदारीपूर्ण अधिमान;

घ. बालक के पितामह-पितामही या मातामह-मातामही या बालक के पितामह-पितामही, मातामह-मातामही के बीच निकट की नातेदारी को प्रोत्साहित करने के लिए, दुर्व्यवहार या उपेक्षा की दशा के सिवाय, पितामह-पितामही या मातामह या मातामही की इच्छा;

ङ. बालक के कल्याण से सुसंगत कोई अन्य कारक।

V. मध्यस्थता

(1) अध्याय 2क के अधीन मध्यस्थता का उद्देश्य पक्षकारों को बालक के कल्याण के बारे में किसी सहमति पर पहुंचने में तथा बालक के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए रूपरेखा बनाने या उसे क्रियान्वित करने में सहायता प्रदान करना।

(2) जहां अध्याय 2क के अधीन की कार्यवाहियों में अविनिश्चित

मुद्दे हैं, वहां न्यायालय पक्षकारों को मध्यस्थता में भाग लेने, मुद्दों को सुलझाने तथा उसके बाद न्यायालय में अनुमोदन की ईप्सा करने का निदेश दे सकेगा।

(3) मध्यस्थ की भूमिका–

क. पक्षकारों को सहयोग करने के लिए प्रोत्साहित करने की है;

ख. माता-पिता को बालक के कल्याण के प्रति उनके उत्तरदायित्वों और कर्तव्यों को समझने में सहायता प्रदान करने की है; और

ग. यदि संयुक्त अभिरक्षा का आदेश जारी किए जाने की संभावना है, तो पक्षकारों के साथ, परस्पर स्वीकार्य रीति में संबंधित मुद्दों को, जिनके अंतर्गत संयुक्त पालन-पोषण समय और विनिश्चिय करने संबंधी सम्मिलित उत्तरदायित्व भी हैं किन्तु उन तक सीमित नहीं है, सुलझाने के लिए कार्य करने की है।

(4) यदि दोनों में से कोई पक्षकार न्यायालय को अध्याय 2क के अधीन जारी किए गए किसी आदेश को उपांतरित करने के लिए आवेदन करता है, तो न्यायालय पक्षकारों को, ऐसे किसी ठहराव पर पहुंचने के लिए जो संबंधित पक्षकारों के लिए कार्यकर हो, मध्यस्थता में भाग लेने का निदेश दे सकेगा।

VI. स्थान-परिवर्तन

(1) पिता अथवा माता, जिसका स्थान-परिवर्तन का आशय है, दूसरे जनक अर्थात् माता की दशा में पिता और पिता की दशा में माता को तीस दिन की अग्रिम सूचना देगी/देगा।

(2) यदि स्थान-परिवर्तन का विरोध किया जाता है तो न्यायालय को इस बात का अवधारण करना चाहिए कि क्या प्रस्तावित स्थान-परिवर्तन बालक के लिए कल्याणकर है।

(3) स्थान-परिवर्तन के मामलों में, बालक के कल्याण का अवधारण करने में, न्यायालय निम्नलिखित कारकों को ध्यान में रखेगा, अर्थात् :-

क. क्या स्थान-परिवर्तन विधिसम्मत प्रयोजन के लिए है;

ख. स्थान-परिवर्तन की ईप्सा करने या उनका विरोध करने के माता-पिता में से प्रत्येक के कारण;

ग. बालक और माता-पिता में से प्रत्येक के बीच नातेदारी की क्वालिटी;

घ. बालक के स्थान-परिवर्तन न करने वाले माता अथवा पिता के साथ भावी संपर्क की सीमा और क्वालिटी पर स्थान-परिवर्तन का प्रभाव:

ङ. वह डिग्री, जिस तक स्थान-परिवर्तन करने वाले माता अथवा पिता तथा बालक के जीवन में स्थान- परिवर्तन द्वारा आर्थिक रूप से, भावनात्मक रूप से और शैक्षिक रूप से वृद्धि हो सकती है;

च. स्थान-परिवर्तन न करने वाले माता अथवा पिता और बालक के बीच, मुलाकात के उपयुक्त प्रबंधों के माध्यम से, नातेदारी बनाए रखने की संभाव्यता।

VII. **विनिश्चय करना**

1- न्यायालय द्वारा अध्याय 2क के अधीन न्यायालय की अभिरक्षा के संबंध में किए गए आदेश में अन्य मुद्दों के साथ-साथ निम्नलिखित मुद्दों को स्पष्ट रूप से ध्यान में रखा जाएगा :-

क. बालक की धार्मिक शिक्षा, उपासना स्थलों पर जाना, धार्मिक समारोह करना और संबंधित मामले

ख. विद्यालय, विषय, कक्षा, पाठ्यक्रम और ट्यूशन का चयन और बालक को स्थानीय क्षेत्र से बाहर किसी विशेष विद्यालय ट्रिप पर जाना है अथवा नहीं;

ग. क्या बालक को अस्पताल में भर्ती कराया जाना है और क्या बालक की कोई अनापातकालीन शल्य प्रक्रिया कराई जानी है;

घ. बालक के हितों और रूझान को ध्यान में रखते हुए

पाठ्येतर गतिविधियों का चयन; और

ङ. बालक अपनी छुट्टियां कहां व्यतीत करेगा और ऐसे मामलों में, जहां आवश्यक हो, वह जानकारी जो माता-पिता में से एक ने दूसरे को देनी है ।

(2) न्यायालय या तो विनिर्दिष्ट विनिश्चय कर सकता है (उदाहरणार्थ, बालक किसी विशेष विद्यालय में प्रवेश लेगा) या किसी मुद्दे के बारे में विनिश्चय करने का उत्तरदायित्व माता-पिता में से किसी एक को या संयुक्त रूप से दोनों को आबंटित कर सकता है ।

VIII. पालनपोषण योजना

(1) पालनपोषण योजना के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

(क) माता-पिता के हानिकर झगड़े पर बालक के प्रभाव को कम करना; और

(ख) माता-पिता को, न्यायालय के हस्तक्षेप का अवलंब लिए बिना, पालनपोषण योजना में सहमति के माध्यम से बालक के पालन पोषण के उत्तरदायित्व को बांटने के लिए परस्पर रूप से सहमत होने के लिए प्रोत्साहित करना ।

(2) पालनपोषण योजना तैयार करते समय, माता-पिता को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि यह बालक के कल्याण के लिए है और यह कि -

क. बालक की दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताएं पूरी हो जाएं;

ख. ऐसी कोई विशेष आवश्यकता, जो बालक की हो सकती है, पूरी हो जाए;

ग. बालक के पास माता-पिता में से प्रत्येक के साथ पर्याप्त समय बिताने के लिए हो जिससे कि वह जहां तक संभव हो, उनमें से प्रत्येक को जान सके;

घ. बालक की शिक्षा, दैनिक नित्यकर्म और कुटुम्ब और मित्रों के साथ संबंध में कम से कम विघ्न पड़े; और

ङ. एक पैतृक गृह से दूसरे पैतृक गृह में पारगमन सुरक्षित और प्रभावी रूप से किया जाए ।

(3) पालनपोषण योजना निम्नलिखित में से एक या अधिक के संबंध में हो सकती है, अर्थात्:-

क. बालक को माता या पिता या माता-पिता किसके साथ रहना है;

ख. वह समय जो, बालक को माता-पिता में से दूसरे के साथ बिताना है;

ग. बालक के लिए पालनपोषण उत्तरदायित्व का आबंटन;

घ. माता-पिता ने एक-दूसरे के साथ पालनपोषण संबंधी उत्तरदायित्व से संबंधित विनिश्चयों के बारे में परामर्श करने की रीति;

ङ. बालक द्वारा अन्य व्यक्तियों के साथ संवाद;

च. बालक का भरणपोषण;

छ. योजना की शर्तों और प्रवर्तन के बारे में विवादों के समाधान के लिए प्रयोग की जाने वाली प्रक्रिया;

ज. बालक या योजना के पक्षकारों की परिवर्तनशील आवश्यकताओं या परिस्थितियों के ध्यान में रखते हुए योजना में परिवर्तन करने के लिए प्रयोग की जाने वाली प्रक्रिया;

झ. बालक की देखरेख, उसके कल्याण या विकास का कोई पहलू या बालक के पालनपोषण संबंधी उत्तरदायित्व का कोई अन्य पहलू ।

(4) पालनपोषण योजना स्वैच्छिक होनी चाहिए और माता-पिता में से प्रत्येक द्वारा सोचसमझ कर बनाई गई होनी चाहिए ।

(5) न्यायालय पालनपोषण योजना में माता-पिता के बीच प्रतिबिंबित उत्तरदायित्वों के विभाजन में साधारणतया तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक वे प्रत्यक्षतः असाम्यापूर्ण न हों ।

(6) यदि आरंभिक पालनपोषण योजना में कतिपय मुद्दे नहीं आते हैं तो माता-पिता विनिश्चय करने संबंधी नए विषयों को शामिल करने के लिए योजना के निबंधनों को उपांतरित करने हेतु न्यायालय में जा सकते हैं ।

IX. मुलाकात

(1) न्यायालय द्वारा मुलाकात के संबंध में किए गए आदेश से यह सुनिश्चित होना चाहिए कि -

क. बालक का माता-पिता में से दोनों के साथ, जब समुचित हो, और विस्तारित कुटुम्ब और मित्रों के साथ भी बारंबार और निरंतर संपर्क रहे; और

ख. माता-पिता में से दोनों को बालक के साथ अच्छा समय बिताने का समान अवसर मिले, जिसके अंतर्गत छुट्टियों और दीर्घावकाश भी शामिल हैं ।

(2) न्यायालय, मुलाकात के अधिकारों और समय का अवधारण करने के प्रयोजन के लिए निम्नलिखित बातों को विचार में रख सकेगा, अर्थात्:-

क. बालक की आयु;

ख. पैतृक गृहों के बीच की दूरी;

ग. कोई छुट्टियां, जिसके अंतर्गत सप्ताहांत, त्यौहार और धार्मिक अवसर तथा विद्यालय के दीर्घावकाश भी आते हैं; और

घ. माता-पिता की कोई अन्य प्रतिबद्धताएं, जिनसे उनके अपने बालक के साथ अच्छा समय बिताने संबंधी उनके सामर्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है ।

(3) न्यायालय मुलाकात संबंधी अधिकारों का प्रयोग करने का समय, उसकी रीति और उसके स्थान को विनिश्चित कर सकता है और ऐसे किसी मुलाकात संबंधी अधिकारों की योजना को विचार में ले सकता है जो माता-पिता द्वारा न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई हो ।

(4) न्यायालय माता या पिता को मंजूर किए गए मुलाकात संबंधी अधिकारों को सीमित, निलंबित या अन्यथा निर्बंधित कर सकेगा, यदि न्यायालय के पास यह विश्वास करने का युक्तियुक्त

आधार है कि परिस्थितियों के कारण ऐसा निर्बंधन बालक के कल्याण के लिए आवश्यक हो गया है या न्यायालय द्वारा इस संबंध में अधिरोपित किसी कर्तव्य का माता-पिता में से किसी एक द्वारा गंभीर या बार-बार उल्लंघन किया गया है।"।

.....